RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 61 अंक : 10 प्रकाशन तिथि : 25 सितम्बर कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 अक्टूबर 2024

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

संघ दीप से जलकर हम सब दीप लड़ी बन जावें।
भाव कर्म को एक बनाकर व्यक्तिवाद बिसरावें।।

सौभाग्य सिंह जी देवडा

सौभाग्य सिंह जी देवडा

ठि. कैलाशनगर (सिरोही)

के राजस्थान राजपूत परिषद मुम्बई, महाराष्ट्र के अध्यक्ष बनने पर

हार्दिक बधाई और शुभकामनाएं

आपकी अध्यक्षता में 43 वां दशहरा स्नेह सम्मेलन मीरा-भायंदर में मनाया जाएगा।

-: शुभेच्छुक :-

ईश्वर सिंह जागसा

सुमेर सिंह करडा

युवराज सिह मगरतलाव

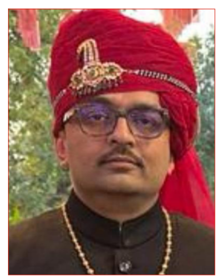

राज कुमार सिंह
कैलाश नगर

-: स्थान :-

CENTER PARK LAWN & A/c. BANQUET

Behind SK Stone, Police Stn.,
Mira-Bhayandar Rd, Mira Road (E) 401 106.

संघशक्ति

4 अक्टूबर, 2024

वर्ष : 61 अंक : 10

-: सम्पादक :-

राजेन्द्र सिंह राठौड़

शुल्क - एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय - सूची

❍ समाचार संक्षेप	✍	04
❍ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर	06
❍ पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैन सिंह बैठवास	08
❍ क्षात्र धर्म	✍ श्री बलवंत सिंह पांची	09
❍ चरित्र निर्माण के चौबीस सूत्र	✍ श्री कृष्ण कुमार सिंह	14
❍ पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)	✍ डॉ. श्री मातुसिंह मानपुरा	17
❍ सकारात्मकता के साथ आगे बढ़ें	✍ रश्मि रामदेरिया	18
❍ अध्यात्म की शक्ति	✍ आचार्य श्री महाप्ज्ञ	19
❍ बप्पा रावल	✍ बाबा श्री निरंजन नाथ	21
❍ क्षत्रियत्व का आधुनिक परिप्रेक्ष्य : नेतृत्व....	✍ श्री जितेन्द्र सिंह देवली	22
❍ ढोंग-धतूर	✍ श्री युधिष्ठिर	24
❍ मेरा क्षात्र धर्म	✍ श्री भंवरसिंह मांडासी	27
❍ आदर्श और अनूठे गाँव	✍ कर्नल श्री हिम्मत सिंह	29
❍ अपनी बात	✍	32

समाचार संक्षेप

राष्ट्रनायक दुर्गादास जयन्ती :

राष्ट्रनायक वीरवर दुर्गादास जी का जन्म द्वितीय श्रावण शुक्ला चतुर्दशी संवत् 1695 तदानुसार 13 अगस्त सन् 1638, सोमवार को हुआ था। दुर्गादास जी का जीवन एक आदर्श क्षत्रिय के अनुरूप होने से अत्यन्त प्रेरणादायी है। अपने कर्तव्य पालन हेतु पूरा जीवन समर्पित कर दिया। कर्तव्य की ही चिन्ता रही, अपनी सांसारिक दुविधाओं का त्याग किया तथा उनके मन में अधिकार का भाव कभी नहीं पैदा हुआ। 30 वर्ष तक लगातार संघर्ष किया पर कभी धैर्य नहीं खोया। अपने पुत्र और पौत्र को भी इस संघर्ष में खोया मगर कर्तव्य मार्ग पर सहर्ष बढते रहे।

महाराजा जसवंतसिंह जी ने दुर्गादास जी के कौशल को पहचाना और उन्हें अपने साथ रखा। उनके साथ रहते धर्मत के युद्ध में उन्होंने अद्भुत वीरता दिखाई, महाराजा प्रसन्न हुए। काबुल में महाराजा के देहावसान के बाद उनके परिवार को लेकर लौट रहे थे तो अटक पर नियुक्त हाकिम ने उनको रोकने का प्रयास किया पर बलपूर्वक वे आगे बढ़े। दिल्ली में भी भारी संकट था। रूपसिंह किशनगढ़ की हवेली पर फौलाद खाँ को लगाया गया जिसने हवेली को चारों ओर से सैनिकों से घेर लिया ताकि बालक अजीतसिंह को यहाँ से निकलने न दें। पर दुर्गादास जी चीर कर निकल पड़े और बालक अजीतसिंह को भी निकाल लिया गया। अब लगातार चलने वाला संघर्ष तेज होने लग गया पर दुर्गादास जी ने पालन-पोषण हेतु अजीतसिंह को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाया तथा संघर्ष हेतु अपनी शक्ति बढ़ाने में जुटे रहे।

दुर्गादास जी ने सम्मुख युद्ध भी किए, छापेमार युद्ध किये, कहीं प्रेम से शक्ति बढाई, कभी पीछे हटकर दक्षता बताई, सभी का कारण अपने उद्देश्य की पूर्ति ही रहता। औरंगजेब के पुत्र अकबर को अपने पक्ष में मिलाया और शत्रु की शक्ति पर आघात किया। अकबर को सुरक्षित शंभाजी तक ले गये और उसकी इच्छानुसार ईरान जाने की व्यवस्था की। उसकी संतान को सुरक्षित रखा तथा इस्लाम की शिक्षा की व्यवस्था भी की। शरणागत वत्सलता स्पष्ट झलकती है।

जोधपुर पर अजीतसिंह का आधिकार होने के बाद उन्होंने अनुभव किया कि चापलूस वर्ग के बहकाने से अजीतसिंह भी उनसे दुराव रख रहे हैं। ऐसी स्थिति में कहीं परस्पर संघर्ष न पैदा हो जाए इसलिए वे मारवाड़ छोड़कर मेवाड़ की तरफ चले गए। वहाँ उन्होंने महाराणा जयसिंह व उनके पुत्र अमरसिंह के बीच के मनोमालिन्य को समाप्त करवाया। रामपुरा की समस्या को सुलझाया। उस समय की परिस्थिति में बादशाह से पीड़ित सब थे परन्तु परस्पर मेल करने का प्रयास नहीं किया गया था। दुर्गादास जी ने मेवाड़, मरहठा, पंजाब, भरतपुर आदि के शासकों से एकता का प्रयास किया।

गीता में वर्णित क्षत्रिय के सभी गुण उनके जीवन में रचे-बसे थे, तभी उनका जीवन प्रेरणादायी है और इसीलिए प्रेरणा लेने हेतु उनकी जयन्ती अनेक-अनेक जगह पर मनाई जाती है। तारीख के हिसाब से 13 अगस्त को जयन्ती मनाई जाती है। तिथि के हिसाब से भी मनाई जाती है। इस वर्ष श्रावण शुक्ला चतुर्दशी 18 अगस्त को थी अत: उस दिन भी अनेक जगह जयन्ती मनी। राजस्थान और गुजरात के अलावा अन्य प्रदेशों में भी जयन्ती मनाई गई। दुर्गादास जी का जीवन एक आदर्श क्षत्रिय का होने के कारण श्री क्षत्रिय युवक संघ में उनकी जयन्ती गाँवों की शाखा स्तर पर भी मनाई गई। शहरों में, कस्बों में व बड़ी-बड़ी शाखाओं में तो बड़े स्तर पर जयन्ती मनी और गाँव की शाखाओं में अपने स्तर पर स्वयंसेवकों ने जयन्ती मनाई।

अन्य सभाचार :

संघ प्रमुखश्री सभी संभागों में प्रवास कार्यक्रम रख रहे हैं। वहाँ स्वयंसेवक अपने दायित्व को प्राथमिकता देते रहें, इसी सम्बन्ध में वहाँ चर्चा होती है। संघप्रमुखश्री का सान्निध्य पाकर स्वयंसेवक भी ऊर्जा महसूस करते हैं और संघ कार्य में संलग्नता बरत रहे हैं। अब तक जहाँ भी संघप्रमुखश्री का प्रवास रहा है, वहाँ संघ कार्य में गति आई है। नई शाखाएं प्रारम्भ हो रही हैं। शिविरों के आयोजन हो रहे हैं। इसी क्रम में संघप्रमुखश्री का 27 व 28 जुलाई को सूरत में प्रवास रहा। दक्षिण गुजरात संभाग की वार्षिक कार्ययोजना बैठक आयोजित रही। शिविर, शाखाएं, संघशक्ति व पथ-प्रेरक की सदस्यता, स्नेह-मिलन कार्यक्रम, सम्पर्क यात्राएँ, महापुरुषों की जयन्तियाँ आदि पर चर्चा कर लक्ष्य तय किए गए।

ऊपर वर्णित उद्देश्य हेतु 3 व 4 अगस्त को संघप्रमुख श्री का बीकानेर में प्रवास रहा। परस्पर चर्चा से संघ कार्य के विभिन्न बिन्दुओं पर लक्ष्य तय किए गये और स्वयंसेवकों को दायित्व सौंपे गये। 10 व 11 अगस्त को संघप्रमुख श्री का इसी उद्देश्य से प्रवास कुचामन में रहा। नागौर संभाग की कार्ययोजना बैठक सम्पन्न हुई।

डीडवाना में 13 अगस्त को संघप्रमुख श्री दुर्गादास जयन्ती मनाने पहुँचे और 18 अगस्त को करौली में आयोजित दुर्गादास जयन्ती में पहुँचे।

25 वर्ष से अधिक आयु के स्वयंसेवकों का एक शिविर 23 से 26 अगस्त तक भीलवाड़ा के त्रिवेणी में स्थित सुमेरगढ़ रिजॉर्ट में सम्पन्न हुआ। अनेक जिलों से आए 150 शिविरार्थियों ने संघ प्रमुख श्री का सान्निध्य प्राप्त किया।

सम्पर्क यात्राएँ :- 4 अगस्त को गोहिलवाड़ संभाग में मातृशक्ति सम्पर्क यात्रा का आयोजन रहा। वरिष्ठ स्वयसेविकाएँ भावनगर, अवानिया, मोरचन्द एवं गुदी में यात्रा पर पहुँची। मातृशक्ति शाखाओं की स्वयंसेविकाओं से सम्पर्क किया। शाखा में नियमितता एवं निरन्तरता पर चर्चा की। झालावाड़ प्रान्त के तनमनिया गाँव में भी 10 अगस्त को एक सम्पर्क बैठक आयोजित हुई जिसमें शाखा तथा आगामी शिविर की तैयारी हेतु जिम्मेवारी दी गई। मध्य गुजरात संभाग के अरवल्ली एवं महीसागर प्रांत में भी अलग-अलग दल बनाकर सम्पर्क किया गया। गोहिलवाड़ संभाग में कच्छ जिले की अबड़ासा तहसील के खुडा, कोठारा और नखत्राण गाँवों में 11 अगस्त को सम्पर्क साधा गया जिसमें पास के गाँवों से भी समाज-बन्धु सम्मलित हुए। 15 अगस्त को मुदरा तहसील के रामगढ़ बलफरा गाँवों में सम्पर्क बनाया। 15 अगस्त को ही मेहसाणा प्रान्त में मातृशक्ति सम्पर्क यात्रा का आयोजन रहा। कड़ा, कांसा और पिलुदरा गाँवों में सम्पर्क किया तथा तीनों स्थानों पर मातृशक्ति शाखा प्रारम्भ की गई। सम्पर्क यात्रा के कार्यक्रमों में विस्तार से श्री क्षत्रिय युवक संघ का परिचय प्रस्तुत किया जाता है तथा शाखाओं और शिविरों में जोड़ने का कार्य चलता है।

स्नेह-मिलन व अन्य कार्यक्रम :

भांकरोटा (जयपुर) में 4 अगस्त को स्नेह-मिलन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। इन कार्यक्रमों में स्वयंसेवकों के अलावा उस क्षेत्र के समाज बन्धुओं से स्नेह-मिलन रहता है और संघ की जानकारी दी जाती है। रूपपुरा (कुचामन) में 11 अगस्त को स्नेह-मिलन रखा गया। गेलासर (मकराना) में 22 अगस्त को स्नेह-मिलन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। 28 जुलाई को भदेसर में सामुहिक यज्ञ का आयोजन तथा विशेष शाखा का आयोजन रहा। 4 अगस्त को चित्तौड़गढ़ प्रान्त के ही चंदेरिया में तथा 11 अगस्त को मनरूप खेड़ा में भी विशेष शाखा तथा सामुहिक यज्ञ का आयोजन रहा। दुर्गा महिला शाखा भायंदर की स्वयंसेविकाओं ने 10 अगस्त को लहरिया महोत्सव मनाया। राजकुल सांस्कृतिक संस्था ने फरीदाबाद में तीज मनाई। कई शाखाओं में रक्षा-बन्धन कार्यक्रम भी रखा

(शेष पृष्ठ 7 पर)

चलता रहे मेरा संघ

(नारोली (गुजरात) में आयोजित उच्च प्रशिक्षण शिविर में 22 अक्टूबर, 2009 को माननीय भगवानसिंह जी रोलसाहबसर द्वारा प्रदत्त स्वागत प्रवचन का संक्षेप)

कहते हैं जो बाहर हो रहा है, वो ही अन्दर हो रहा है। जो संसार में हो रहा है वह हमारे देश में हो रहा है और जो देश में हो रहा है वो ही हमारे गाँव में, हमारे परिवार में और वही हमारे अन्दर हो रहा है।

आप सब पढ़े-लिखे हैं। आप अखबारों में दुनिया भर की खबरें पढ़ते हैं और आप सब जानते हैं कि आज सारा संसार भयाक्रान्त है। किसी का जीवन सुरक्षित नहीं दिखता।

विज्ञान ने आविष्कार बहुत किए मगर उनसे हमको आवश्यक सुख-शान्ति नहीं मिली। सुख-सुविधाओं के संसाधन बढ़े हैं मगर आंतरिक शान्ति घट रही है।

पड़ोसी राष्ट्र आतंकित हैं, आशंकित हैं और जिस देश से हम भयाक्रांत हैं वो खुद अब भयाक्रान्त है।

जनसंख्या बढ़ती जा रही है तो साथ में समस्याएँ भी बढ़ती जा रही हैं। आज सभी राष्ट्र परेशान हैं। नेपाल अन्दर और बाहर से दुःखी है। भूटान की सीमाएँ असुरक्षित हैं। बंगलादेश, श्रीलंका भीतर की आग की ज्वालाओं में जल रहे हैं। पाकिस्तान मौत के मुँह में जा रहा है। ये सब संसार के बाहरी देशों की बाते हैं।

हमारे देश में पूर्व में आसाम, मेघालय, नागालैण्ड आदि के राज्य आतंकवाद और नक्सलवाद से भयाक्रन्त है और वे सारे देश में फैले जा रहे हैं। हमारे गाँवों में पहले जो परस्पर प्रेम था, वह आज नहीं रहा। आज परिवार टूट रहे हैं। किसी का किसी पर भरोसा नहीं है। समष्टिगत और व्यक्तिगत रूप से सभी दुखी हैं। व्यक्ति दूसरों से और अपने आप से दुखी है।

हमारी इंद्रियाँ मन के नियंत्रण में नहीं, मन बुद्धि के, बुद्धि जीवात्मा के नियंत्रण में नहीं है। सब बिखर-सा गया है। क्या हो रहा है यह सब?

इन समस्याओं को सुलझाने के लिए हम कहाँ से शुरू करें? बाहरी सुरक्षा, सुख-सुविधाओं के लिए हमने बहुत प्रबन्ध किये। मगर परिणाम? आज पाकिस्तान अमेरिका पर, अमेरिका पाकिस्तान पर, एक दूसरे पर आरोप लगा रहे हैं। डरा रहे हैं। वैसे ही हमारी इन्दियाँ हमारे मन को डरा रही हैं। मन शान्त नहीं है। जब हमारे भीतर ही शान्ति नहीं है तो बाहर कभी नहीं हो सकती। उसी तरह देश भी यदि भीतर से शान्त व स्वस्थ नहीं है, तो बाहर से वह भयाक्रांत रहेगा ही।

हम अपने पेट के लिए प्रयत्न में लगे रहते हैं और स्वस्थ होने के यत्न कर रहे हैं, पर जब तक हम अंदर से स्वस्थ नहीं होंगे तब तक बाहर का स्वास्थ्य नहीं मिल सकता।

बाहरी नहीं, भीतरी चेतना-आनन्द को जगाने के लिए हम प्रार्थना करते हैं- 'सर्वे भवन्तु सुखीनः सर्वे सन्तु निरामया।' पर हम सुखी कैसे रहें? संयमित बिहार-विचार से ही हम स्वस्थ हो सकते हैं। हम स्वस्थ होंगे तो परिवार में सुख व शांति आएगी। फिर गाँव में, देश में सुख-शान्ति ला सकेंगे। तब हमारा देश एक होगा। अनुशासित होगा और फिर बाहरी कोई ताकत हमको मिटा नहीं सकती।

सुख-शांति का संदेश देने वालों को अपने भीतर से सुख-शांति का संदेश निकालना पड़ेगा, सुनना पड़ेगा कि- 'गीत तुम्हारे कंठ के बगीचे खिलते रहे....।' हमारे महान पुरुषों ने हमको संदेश दिया पर- 'मैं चुन न सका, यह बात बड़ी अकुलाती है।' बिना कोई अकुलाहट जागृति नहीं आएगी। मीरां को अकुलाहट हुई, तब वह भीतर से जागृत हुई थी। ईश्वर में भजन बिना सुख-शांति नहीं मिल सकती।

संसार को यदि सुख-शांति देनी है तो पहले आपको उनका उपार्जन करना पड़ेगा। मगर हमारी स्थिति तो- 'अर्चना की थाली पास में नहीं है।' की बनी हुई है। फिर पूजा कैसे होगी? क्या संसार को दे पाएंगे? पैसा यदि मिलता जा रहा है, मगर यदि भीतर से खाली होते जा रहे हैं तो क्या कुछ कर पाएंगे? संसार की सेवा करने के लिए हमें यहाँ भेजा है मगर हम संसार में ही उनझ जाएं तो भीतर में नहीं जा पाएंगे।

लोग कहते हैं-अभी तो हम जवान हैं, पैसे कमाने के दिन हैं, भजन जरूर करेंगे मगर बुढापे में। बुढापे में भजन नहीं हो सकते। भजन के लिए युवानी ही श्रेष्ठ समय है। इसीलिए श्री श्त्रिय युवक संघ युवाओं को प्रशिक्षण देता है जिससे अपने भीतर सुख-शांति प्रकट हो सके। ऐसा होने पर ही संसार को आप सुख-शांति दे पाएँगे।

भीतर से अगर हम अभय हैं तो हम दूसरों को भी अभय बना सकते हैं। इसीलिए जागृत रहना आवश्यक है। शिविर के इन ग्यारह दिनों में आपको जागृत रहकर भीतर की अभयता, सुख व शांति को जगाना है और संसार को दे जाना है। प्रमाद या आलस्य वश कहीं ऐसा न हो कि शिविर समाप्त हो जाने पर आपको गाना पड़े कि- 'गीत तुम्हारे कंठ के बगीचे जरूर खिले थे मगर मैं चुन न सका।'

संघ के गीत सुनने पर जगत में सुख-शांति आ जाएगी ऐसा मत मानना मगर हमारा जीवन जरूर बलवान बनेगा। बलवान बनोगे तो समाज का, संसार का काम कर सकोगे। आपके भीतर अभय, सुख व शांति का उद्भव हो इसी चाह के साथ संघ आपका स्वागत करता है।

पृष्ठ 5 का शेष

समाचार संक्षेप

गया। रामदेवरा में 4 अगस्त को अनंगपाल तोमर की 1023वीं जयन्ती मनाई गई। पोकरण में 11 अगस्त को शहर की सभी शाखाओं का सामुहिक भ्रमण कार्यक्रम रहा। 22 अगस्त को बोरावड़ में स्नेह-मिलन सम्पन्न हुआ। जयपुर में 8 सितम्बर को शाखाओं के स्वयंसेवक एक दिवसीय भ्रमण पर पापड़ के बालाजी पहुँचे और दिन भर अलग-अलग कार्यक्रमों का आनन्द लिया। बरसात का आनन्द लिया। झरने में स्नान का आनन्द लिया।

क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन के कार्यक्रम :

बुटाटी में 3 व 4 अगस्त को क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन की कार्यशाला सम्पन्न हुई। इसमें 60 समाज बन्धुओं ने भाग लिया। 9 से 11 अगस्त तक तीन दिवसीय भ्रमण कार्यशाला का आयोजन हुआ जिसमें चित्तौड़गढ़ और मांडलगढ़ क्षेत्र का भ्रमण किया गया। दुर्ग में स्थित ऐतिहासिक स्थलों पर पहुँचकर उनके ऐतिहासिक महत्त्व को समझा। तीन दिन तक ऐतिहासिक स्थानों का भ्रमण, समाज की स्थिति और आवश्यकता आदि पर चर्चा हुई। पूज्य तनसिंह जी के साहित्य से उन प्रसंगों को सुना। जैसलमेर में 24 व 25 अगस्त को दो दिवसीय कार्यशाला सम्पन्न हुई। 26 अगस्त को बीकानेर में कार्यशाला का कार्यक्रम रहा। 24 अगस्त को जूना फोर्ट (बाड़मेर) में भ्रमण कार्यशाला का आयोजन रहा। 8 सितम्बर को जयपुर के क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन के कार्यकर्ता भ्रमण पर निकले और दिन भर का कार्यक्रम रहा। सभी कार्यक्रमों में संघ की चर्चा तथा समाज की आज की स्थिति की चर्चा रही।

तूफान और बवंडर में बड़े-बड़े पेड़ समूल उखड़ जाते हैं। लेकिन कोमल लता पर कोई असर नहीं होता। अहं को भूलकर कोमल लता की भाँति आंधी तूफान का सामना करो, सफलता स्वयं तुमको गले लगा लेगी।

- भगवती प्रसाद

पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

पूज्य श्री तनसिंह जी एक सजग पत्रकार और राजस्थानी तथा हिन्दी भाषा के उच्च कोटि के लेखक थे। लेख लिखना उनके स्वभाव व आदत में सुमार था। उनका एक लेख ''प्रजा सेवक'' अखबार में छपा। पूज्य श्री के इस लेख को पढ़कर आयुवानसिंह जी पूज्यश्री से बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने पूज्यश्री को एक पत्र लिखा। इस पत्र में आयुवानसिंह जी ने पूज्यश्री के लेख की तारीफ की। आयुवानसिंह जी द्वारा पूज्यश्री तनसिंह जी को प्रथम पत्र लिखा गया, वो इस प्रकार था –

डी.वी.एम. स्कूल, मेड़ता सिटी
तारीख 5 फरवरी, 1942

प्रिय तनसिंह जी,

मैंने आपका 'राजपूतों से द्वेष क्यों?' शीर्षक से लिखा हुआ एक पत्र 'प्रजा सेवक' में पढ़ा।..... लेखन शैली और शिष्टाचार का बिना ध्यान रखते हुए, मैं आपका अपने प्रतिद्वन्द्वियों को मुँह तोड़ उत्तर देने के लिए हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

.....हे स्वाभिमानी युवक! मुझे आपके ऊपर गर्व है। समयानुकूल पथ-प्रदर्शन करते हुए इन 'छोटे सिंहों' को उन्नति के पथ पर अग्रसर होना सिखाओ।

आपका शुभाकांक्षी : आयुवानसिंह

पूज्य श्री तनसिंह जी और श्री आयुवानसिंह जी का सर्वप्रथम परिचय ''प्रजा सेवक'' अखबार में छपे इस लेख के जरिये हुआ, तत्पश्चात दोनों के मध्य पत्र-व्यवहार का सिलसिला प्रारम्भ हुआ।

दूसरा पत्र की आयुवानसिंह जी ने बाड़मेर से लिखा। (उनका मेड़ता से बाड़मेर स्थानान्तरण हो चुका था।)

श्री मल्लीनाथ राजपूत बोर्डिंग हाउस, बाड़मेर
दिनांक 3 अगस्त, 1942

प्रिय तनसिंह जी,

आपका 29-7-42 का पत्र आज मिला।.... याद रखो हमें बहुत कुछ करना है। व्यापक और तीव्र क्रांति द्वारा इस विस्मृत निद्राग्रस्त क्षत्रिय समाज में जागृति उत्पन्न करनी है। अपना समाज अशिक्षित है और जो डिग्रियाँ लिए हुए शिक्षित हैं, वे निरे किताबी कीड़े हैं, व्यवहारिक ज्ञान से शून्य और स्वार्थ परायण हैं।

मैं आप जैसे होनहार युवकों से इस महान क्रांति का बिगुल बजाने की आशा करता हूँ।

आपका शुभाकांक्षी : आयुवान सिंह शेखावत

पत्र व्यवहार का यह सिलसिला निरन्तर चलता रहा और दोनों की पारस्परिक निकटता भी घनिष्ठता और अभिन्नता में बढ़ती रही। एक और पत्र बाड़मेर से आयुवानसिंह जी द्वारा अंग्रेजी में लिखा गया –

Barmer, 23rd October, 1944

Dear Tan Singh Ji

Your letter dated 16-10-44 is Just to hand... I have gone through your letter Carrefully and have reached the Point that what you have Planned for the welfare of Our Community is appriciable. I appriciate Your Views. Any nation may be proud of such a devoted spirited hero like you but I am afraid that our organization may not be proved as a 'bubble.' What you have written is quite acceptable. As regards the members I live among such a society where no man is interested in such Movements. As for the boys their thoughts are like Sandy dunes building, Sweeping and shifting by the slightest blow of wind. I give my name as a member of the said organisation and am ready to follow the further instructions.... I expect You to let me know the Particulars of the organisation in more details.

- Sincerly Yours : Ayuwan Singh

(शेष पृष्ठ 13 पर)

क्षात्रधर्म

– बलवंत सिंह पांची

हमारा लक्ष्य क्या हो? यह प्रश्न जटिल नहीं है, यद्यपि इसी प्रश्न पर बुद्धिवादी लोग नाना प्रकार के तर्क-वितर्क खड़े करते हैं। जटिलता लक्ष्य निर्धारण में नहीं, जटिलता सिर्फ इसी बात के स्पष्टीकरण में है, कि हमारी प्रकृति क्या है? हमारा गुण-स्वभाव क्या है? यदि इन प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है, तो लक्ष्य भी स्पष्ट हो जायेगा, क्योंकि कोई भी लक्ष्य जो हमारे गुण-स्वभाव और प्रकृति के विपरीत पड़ता हो-वह लक्ष्य अव्यावहारिक और त्याज्य होगा। जो लक्ष्य हमारे गुण-स्वभाव और प्रकृति आदि के अनुकूल होगा, वही लक्ष्य हमारे विकास का मार्ग होगा और साथ ही साथ वही लक्ष्य साध्य योग्य भी होगा। व्याघ्र और सिंह आदि हिंसक प्राणियों के लिए अहिंसा का लक्ष्य असाध्य है, फिर भी वही लक्ष्य गाय के लिए साधन में सरल होगा, क्योंकि अहिंसा जहाँ व्याघ्रादि जन्तुओं की प्रकृति, गुण और स्वभाव के प्रतिकूल है, वहाँ गाय जैसे प्राणियों के अनुकूल है। गाय का विकास अहिंसा से ही हो सकता है, किन्तु अहिंसक व्याघ्र का जीवन दूभर हो जायेगा, श्रेयसाधन तो दूर रहा। इसलिए हमें अपने गुण, स्वभाव और प्रकृति का ज्ञान प्राप्त करना पड़ेगा।

इस दृष्टि से गीता का अध्ययन करने पर हमें प्रतीत होगा कि गीता ने साँख्य के प्रकृति तत्व को स्वीकार किया है, और उस प्रकृति को त्रिगुणात्मिका माना है-

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः।
निबध्ननित महाबाहो देहे देहिनमव्ययम्।।

-गी. 14/5

हे महाबाहो! सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण ऐसे यह प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुण इस अविनाशी जीवात्मा को शरीर में बाँधते हैं।

कोई भी ऐसा व्यक्ति संसार में नहीं हो सकता, जो इन तीनों गुणों से रीहत हो। न्युनाधिक रूप से सभी गुण विद्यमान रहते हैं। सतोगुण जीवात्मा को ज्ञान और सुख की आसक्ति से बाँधता है-

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानध।।

-गी. 14/6

हे निष्पाप! उन तीनों गुणों में प्रकाश करने वाला, निर्विकार सत्वगुण तो निर्मल होने के कारण सुख की आसक्ति से और ज्ञान की आसक्ति से बाँधता है-

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ।।

-गी. 14/8

हे भारत! सर्वदेहाभिमानियों को मोहने वाले तमोगुण को अज्ञान से उत्पन्न हुआ जान। वह इस जीवात्मा को प्रमाद, आलस्य और निंद्रा के द्वारा बाँधता है।

किन्तु सतोगुण में जहाँ ज्ञान और सुख की आसक्ति है और तमोगुण में जहाँ अज्ञान और प्रमाद की आसक्ति है, वहाँ वे दोनों नितान्त निष्क्रिय और आकांक्षारहित होते हैं। रजोगुण में इच्छा और क्रिया है-

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम्।।

-गी. 14/7

तथा है अर्जुन! रागरूप रजोगुण को कामना और आसक्ति से उत्पन्न हुआ जान। वह इस जीवात्मा को कर्मोकी और उनके फल की आसक्ति से बाँधता है।

राष्ट्र-निर्माण और समाज निर्माण की इच्छा और क्रिया केवल रजोगुण से ही संभव है। अकेला सतोगुण ज्ञान और

सुख की आसक्ति उत्पन्न करता है, किन्तु सुख और ज्ञान के उपार्जन की इच्छा और क्रिया सतोगुण में नहीं रहती। तमोगुण अज्ञान और प्रमाद की आसक्ति उत्पन्न करता है, किन्तु अज्ञान और प्रमाद द्वारा जो मनुष्य के चरित्र में विकार उत्पन्न हो सकते हैं, वे अकेले तमोगुण से भी नहीं हो सकते। इधर रजोगुण भी इच्छा और क्रिया की आसक्ति उत्पन्न करता है, किन्तु यह भी अकेले कुछ नहीं कर सकता। इच्छा और क्रिया को या तो सात्विक होना पड़ेगा। सतोगुण जब तक रजोगुण की इच्छा और क्रिया नहीं लेगा, तब तक ज्ञान और सुख के उपार्जन की कल्पना वृथा है। उधर तमोगुण भी रजोगुण की इच्छा और क्रिया नहीं लेता, तब तक वह अज्ञान और प्रमाद द्वारा विकार उत्पन्न नहीं कर सकता। इस प्रकार दो ही जोड़े बन सकते हैं–

(1) सतोगुण + रजोगुण

(2) तमोगुण + रजोगुण

सतोगुण और तमोगुण प्रकृति के दो छोर हैं। नदी के दो किनारे जिस प्रकार मिल नहीं सकते, उसी प्रकार जहाँ ज्ञान है वहाँ अज्ञान नहीं है, जहाँ प्रकाश होगा वहाँ अन्धकार नहीं होगा, जहाँ न्याय है वहाँ अन्याय नहीं है। इन दोनों की बीच की कड़ी रजोगुण है। नदी के दो किनारों के बीच इच्छा की क्रियाशील जलधारा बहती है और वही संसार में अच्छे और बुरे के परिणाम उत्पन्न करती है। बुराई के साथ क्रिया की इच्छा नहीं मिलती, तब तक कोई बुरा हो नहीं सकता। अच्छाई के साथ भी जब तक क्रिया की इच्छा नहीं मिलती, तब तक कोई अच्छा हो नहीं सकता। उसी प्रकार इच्छा और क्रिया या तो बुराई की ओर जायेगी या अच्छाई की ओर जायेगी, किन्तु शुद्ध स्वरूप में स्थित नहीं रह सकती। रजोगुण जब सतोगुण की ओर उन्मुख होता है, तब क्षत्रिय वृत्ति का जन्म होता है और रजोगुण जब तमोगुण की ओर उन्मुख होता है, तब आसुरी वृत्ति उत्पन्न होती है। उपरोक्त विश्लेषण को ठीक प्रकार समझने के बाद ही गीता में वर्णित क्षात्रधर्म के शुद्ध स्वरूप को तत्व की दृष्टि से जाना जा सकता है।

यह सृष्टि द्वन्द्वात्मक है। आदि काल से अच्छे और बुरे के बीच संघर्ष चलता आ रहा है। न तो अच्छाई का कभी समूल नाश हुआ और न बुराई का कभी नाश हो सकता है। सृष्टि के प्रारम्भ में नारायण पूर्ण सत्वस्वरूप थे। वे सतोगुण की पराकाष्ठा थे। उनमें एक से अनेक होने की रजोगुणीय इच्छा उत्पन्न हुई और ब्रह्माजी का जन्म हुआ, तथा सृष्टि का प्रादुर्भाव भी। किन्तु तमोभाव वैसे ही पड़ा नहीं रहा, उसमें भी रजोगुणीय इच्छा हुई और उन्हीं से राक्षस पैदा हुए जिन्होंने सृष्टि का विध्वंस भी शुरू किया। सत्ययुग में भी हिरण्याक्ष, हिरण्यकश्यप और जलंधर जैसे राक्षस हो चुके हैं। त्रेता में रावण और कुम्भकरण हुए। द्वापर में कंस, जरासंघ और कालयवन जैसे हो चुके हैं और कलियुग में तो नाम गिनाने की आवश्यकता ही नहीं–एक ढूँढो और लाख मिलते हैं। युग चाहे जैसा हो, दुष्टता का समूल नाश कभी नहीं हुआ। लेकिन यह भी ध्यान रखने की बात है, कि अतुल बल साधन और सत्ता से युक्त होकर, अमर होने के वरदान पाकर भी उन दुष्ट राक्षसों ने सत्व का समूल विनाश करने में असफलता ही पाई । हिरण्यकश्यप के घर में उसका पुत्र प्रहलाद जन्मा, रावण के भाई विभीषण हुए, द्वापर में कंस के भानजे के रूप में श्रीकृष्ण आए। अभिप्राय यह है, कि न तो अच्छाई कभी नष्ट हो सकी और न बुराई। यह सत्य हमें बिलकुल ही घोट कर पी जाना चाहिए।

सृष्टि के लम्बे काल–क्रम में कभी सत्य असत्य पर विजयी होता है, तो कभी न्याय को अन्याय दबा लेता है, कभी प्रकाश अन्धकार को नष्ट कर देता है तो कभी अच्छाई बुराई के आगे घुटने टेक देती है, किन्तु दोनों विपरीत गुणों का अनवरत संघर्ष सनातन रूप से चल रहा है। यह संघर्ष ही सृष्टि को द्वन्द्वात्मक सिद्ध करता है और इसी से भगवान का सृष्टिगत उद्देश्य पूर्ण होता है।

पश्चिम की विचारधाराएँ जिनमें आर्यधर्म की वैज्ञानिकता का अभाव है, इस संघर्ष को बहुत ही संकुचित रूप देती हैं। पश्चिम सोचता है, कि यह संघर्ष जीव अपने पेट और स्वार्थ के लिए करता है। एक प्रबल मछली दूसरी निर्बल मछली को खाकर जीवित रहती है। जहाँ निर्बल अपने जीवन के लिए संघर्ष करता है, वहाँ सबल उसे अपना भोजन बना कर उसकी कीमत पर और भी अधिक सबल बनने की चेष्टा करता है और इस प्रकार जो श्रेष्ठतम और अत्यधिक बल सम्पन्न रहता है, वही अस्तित्व कायम रख लेता है। इस विचार से Survival of the fittest की Theory का जन्म हुआ। इसी आधार पर पश्चिम की विचारधारा विकास का मूल्यांकन करती है। पश्चिम का कहना है, कि इस संसार में वह विकसित हो सकता है, जो आगे जाने वाले का गला दबा ले और पीछे चलने वाले के लात मार दे। पश्चिम ने इस प्राकृतिक सत्य की प्रतिष्ठा कर निर्बल के लिए विचारक्रान्ति का मार्ग बताया। पश्चिम का क्रान्तिकारी, समाज में निर्बल और सबल, मालिक व मजदूर, शासक और शासित, शोषक और शोषित के बीच भेद की सीमा रेखाएँ खींच कर उन्हें प्रकाश में लाता है और शोषित के मन में शोषक के प्रति घृणा उत्पन्न कर शोषितों की संगठित शक्ति से शोषक व सबल को नीचे गिरा कर स्वयं अपने आपकी उस जगह प्रतिष्ठा करता है। यद्यपि यह भेद कृत्रिम है, क्योंकि इसमें पश्चिम के क्रान्तिकारी का निहित स्वार्थ है। निर्बल को सबल से, शोषित को शोषक से, मजदूर को मालिक से और शासित को शासक से लड़ा कर उसे विजयी बना कर शत्रु के स्थान पर उसे बैठाना चाहता है। जिसका अभिप्राय यह हुआ, कि आज का निर्बल, शोषित, मजदूर व शोषित कल का सबल, शोषक, मालिक और शासक बनेगा और उनके शत्रु उनकी जगह पर निर्बल, शोषित, मजदूर और शासित हो जायेंगे; तथापि तर्क के लिए इस भेद को प्राकृतिक मान लें तो यह स्पष्ट होता है कि पश्चिम का क्रान्तिकारी धृणा के आधार पर अपने उद्देश्य की सिद्धि करना चाहता है। उसके विचार और कार्यप्रणाली के लिए यह आवश्यक है, कि क्रान्ति से पहले उपरोक्त वर्गों में तीव्र धृणा के भाव भरे जावें। इस प्रकार पश्चिम का क्रान्तिकारी संगठन तो संगठन ही कहलायेगा, किन्तु उसकी घृणा में तमोगुण का आभास हैं, जो विरोधी को अपनी भयावहता के कारण नष्ट तो कर देगा, किन्तु अन्त में वह अपने आपको खाकर समाप्त होगा। राक्षस भी एक बार तो इन्द्रलोक तक का राज्य ले लेता है, किन्तु जब उसके पास संसार की सम्पूर्ण सत्ता और ऐश्वर्य प्राप्त हो जाता है तो निरंकुश और स्वेच्छाचारी बन कर ही विनाश का कारण बनता है। तमोगुण के सन्मुख उचितानुचित अथवा सद्-असद् के विवेक का आधार पेट की तुच्छ भूख है- उसके सामने नैतिकता और न्याय का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। शरीर के सुख भोग के लिए जो भी अच्छा लगे, वही करेगा और यही है रजोगुण का तमोगुण से आक्रान्त होकर राक्षसवृत्ति को जन्म देना।

आर्यधर्म में इस प्रकार की बात नहीं। आर्यधर्म इस संघर्ष को पेट का संघर्ष नहीं मानता, सृष्टि के मूलभूत संघर्ष को वह सत्व और तम का संघर्ष मानता है। आर्यधर्म प्राणी मात्र को भगवान का रूप मानता है, इसलिए उनके सामने विद्वेष जैसी कोई वस्तु नहीं रहती। वह संघर्ष के लिए घृणा और द्वेष की आवश्यकता अनुभव नहीं करता। समस्त प्राणियों में नारायण के अस्तित्व से एकता का आभास अनुभव किया जाता है। फिर भी आर्यधर्म सभी प्राणियों की वृद्धि और विनाश के लिए आसक्त नहीं है। वह तो इससे भी बढ़ कर उनके विनाश और वृद्धि के उत्तरदायित्वों को भी स्वीकार नहीं करता। उसका मत है, कि पुरुष जगन्नियता का साधन है और उसी की इच्छा से बरबस होकर निरन्तर चलता रहता है। इसलिए वह पश्चिम के विद्वेष-प्रचार में लाभ की अपेक्षा अपने धर्म-प्रचार की वृत्ति के लाभ को

सहस्त्र गुना अधिक मानता है। वह अपने कर्मों को स्वार्थ की अपेक्षा त्यागमय बनाने अर्थात् इच्छा और क्रिया को सत्वोन्मुखी बनाने में ही अपना कर्तव्य मानता है। दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं, कि आर्यधर्म रजोगुण को सत्वमुखी बनाने का प्रयास करता है अर्थात् राजसिक शक्ति को राक्षसवृत्ति की अपेक्षा क्षत्रिय वृत्ति में परिवर्तित करने का प्रयास करता है।

संसार में न्याय-अन्याय के तथा प्रकाश व अन्धकार के इस संघर्ष में रजोगुण को सत्वमुखी बनाने का कार्य आर्यधर्म में क्षत्रिय-परम्परा करती है। क्षत्रिय का कर्तव्य है, दुष्टों का दलन व सज्जनों की रक्षा कर धर्म की स्थापना व रक्षा करना। तमोभाव को नष्ट कर सतोगुण की रक्षा करना। सरल भाषा में हम कह सकते हैं, कि अमृत होकर जीने वाले समाज की रक्षा करना और विष होकर जीने वाले समाज को नष्ट करना। क्षत्रिय वृत्ति के बिना ब्राह्मण की सत्ववृत्ति का जीवित रहना कठिन है, बल्कि सत्ववृत्ति तमोभाव द्वारा आक्रान्त होकर शूद्रत्व के निकृष्ट गुणों को प्राप्त होती है। योगीराज अरविन्द ने तो यहाँ तक कह डाला, कि जिस देश में राजा क्षत्रिय नहीं हो उस देश में ब्राह्मण का रहना निषिद्ध है। उन्होंने यह भी कहा है कि सत्व को रज की सृष्टि करनी चाहिए और रज को सत्व-रक्षा करनी चाहिए। जब ब्राह्मण राजा होगा, तो उसका सतोगुण, तमोगुण से आक्रान्त होकर शूद्रत्व के निकृष्ट गुणों को प्रश्रय देगा।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट मत प्रतिपादित होता है, कि आर्यधर्म के उत्थान का पहला उपाय है- रज की सृष्टि, रज को सबल करना अर्थात् क्षात्रधर्म का पुनरुत्थान। कुछ भ्रान्त महत्त्वाकांक्षियों का मत है, कि ब्रह्मतेज से भारतवर्ष खोये हुए वैभव को प्राप्त हो सकता है। यदि ब्रह्मतेज को सतोगुण ही मानते हैं, तो इसमें मेरी श्रद्धा है, किन्तु जब तक सत्व रज की सृष्टि नहीं करेगा, ब्रह्मतेज का निर्माण नहीं करेगा, तब तक भारतवर्ष के खोये गौरव को प्राप्त करने की कल्पनाएँ या तो भ्रान्ति हैं अथवा निहित स्वार्थों से सम्पन्न मात्र कल्पना है। उपरोक्त भ्रान्त महत्त्वाकांक्षी ब्रह्मतेज के नाम पर क्षात्रतेज की उपासना करना चाहते हैं, जो उनसे होना असंभव है। ब्राह्मण को क्षत्रिय बन कर शस्त्र उठाने की अपेक्षा शास्त्र शिक्षा देकर क्षत्रिय को सत्वोन्मुख करने में अपना कर्तव्य दिखाई देना चाहिए। यह उससे ठीक प्रकार सम्पादित हो सकता है। क्षात्रधर्म के उत्थान और क्षत्रियवृत्ति के निर्माण का मेरा अभिप्राय उस जाति विशेष का उत्थान नहीं जो क्षत्रिय के नाम से पुकारी जाती है, बल्कि उस जाति को क्षत्रिय-चरित्र, क्षत्रिय-शिक्षा और क्षत्रियधर्म का पाठ पढ़ाने से है, जो चरित्र-शिक्षा और धर्म वस्तुतः आर्य चरित्र, आर्यशिक्षा और आर्यधर्म ही है। इसलिए भागवत विधान में जो ब्राह्मण की ओर से होना है, उसे होनी समझकर हम इस प्रश्न को, भारतवर्ष के भविष्य को वर्तमान बनने तक उसी के भरोसे छोड़ देते हैं।

जो लोग क्षात्रधर्म के उत्थान को साम्प्रदायिक और संकुचित कहकर पुकारते हैं, वे वस्तुतः अपने ही दृष्टिकोण का प्रदर्शन करते हैं। क्षत्रिय अपने लिए नहीं जीता, वह अमृत होकर जीवित रहनेवाले समाज के लिए जीता है। यही नहीं, वह तो प्राणी मात्र के लिए जीता है। समाज के लिए जीवित रहने की क्षात्रवृत्ति को कोई संकुचित कहकर पुकारे तो कितना हास्यास्पद है। पश्चिम तो इस बात को समझ ही नहीं सकता, क्योंकि उसने क्षत्रिय की भाँति किसी जाति या वर्ग को नहीं देखा, जो समाज के प्रकाश के लिए स्वयं जलता हो और समाज के लिए निस्वार्थ रूप से सर्वस्व त्याग कर सकता है। इसलिए पश्चिम के लोगों का यह आक्षेप तो क्षम्य है किन्तु जो भारतवासी हैं और आर्यधर्म और हिन्दूधर्म के पुनरुत्थान का ढोल पीटते हैं, उनके लिए ऐसे आक्षेप करना या तो वस्तुस्थिति का अज्ञान सिद्ध करता है अथवा उसके अभाव में किसी निहित स्वार्थ का अस्तित्व सिद्ध करता है।

क्षात्रधर्म के उत्थान का अर्थ है सृष्टि के द्वन्द्वात्मक संघर्ष में निस्वार्थता, कर्तव्यपरायणता, कर्तापन के अहंकार के प्रति उदासीनता, कर्मभूमि में उच्चकोटि की त्यागयुक्त उदारता आदि उत्कृष्ट गुणों का पुनरुत्थान। यही गीता का क्षात्रधर्म है।

गीताज्ञान का प्रसार क्षत्रिय चरित्र की शिक्षा बिना अधूरा है। हमें गीता सुनाने के लिए अर्जुन जैसे पात्रों को ढूँढना ही पड़ेगा। सीताजी की प्रतिमा बनाकर राम द्वारा अश्वमेघ यज्ञ तो किए जाने की बात फिर भी संभव है, किन्तु नकली अर्जुन से महाभारत का युद्ध लड़ाने की कल्पना आकाश कुसुम की भाँति है। गीता का कार्यक्षेत्र आज वास्तविक रूप से क्षात्रधर्म का पुनरोदय है। क्षात्रधर्म के पुनरोदय की सार्थकता आर्यधर्म के पोषक, रक्षक व अनिवार्य अङ्ग बनकर रहने में ही नहीं है, बल्कि उक्त धर्म के हेतु निस्वार्थ त्याग की भावना के प्रतीक होकर प्रत्येक क्षत्रिय के जीवित रहने में है। इस प्रकार गीता जहाँ छोटे को बड़े के लिए प्रेम और कर्तव्यपूर्वक त्याग करना सिखाती है, वहाँ पश्चिम बड़ों को छोटों का भक्षण करना सिखाती है।

जो व्यक्ति अपने समाज में घृणा के बीज बोकर वर्ग-वैमनस्य खड़ा करना चाहता है, तो निसन्देह यही समझना चाहिए कि वह अपनी कुछ महत्त्वाकांक्षाओं को समाज-सेवा के मार्ग से पूर्ण करना चाहता है। गीता का मार्ग इस आसुरी मार्ग के विरुद्ध क्षात्रधर्म का पुनरुत्थान चाहता है। क्षात्रधर्म के पुनरुत्थान में ही सर्वजनहिताय और बहुजनसुखाय की कल्पना व्यावहारिक रूप धारण करती है। जिस जातीयता में सर्वजनहिताय और बहुजनसुखाय की बात नहीं रहती, वह जातीयता तमोगुणीय है और उसी को हम साम्प्रदायिक भी कह कर पुकार सकते हैं। ●

पृष्ठ 8 का शेष

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

श्री आयुवानसिंह जी के इन पत्रों से लगता है कि वे राजपूतों के संगठन के लिए कितने व्यग्र थे। पूज्य श्री तनसिंह जी ने पिलानी में अध्ययनरत रहते हुए भी क्षत्रिय युवक संघ की स्थापना का जो प्रारूप बनाया था, उससे श्री आयुवानसिंह जी बहुत प्रभावित हुए। सन् 1947 में श्री क्षत्रिय युवक संघ का चौथा शिविर पी.टी. सी. बाड़मेर श्री आयुवानसिंह जी का पहला शिविर था। सन् 1948 में श्री क्षत्रिय युवक संघ का सातवाँ शिविर कुचामन ओ.टी.सी. भैरूं तालाब (कुचामन) श्री आयुवानसिंह जी का तीसरा शिविर था। इस शिविर से ही वे समर्पित भाव से जीवन भर के लिए संघ से जुड़ गये और श्री तनसिंह जी के प्रबल समर्थक और सहयोगी बने।

श्री आयुनानी सिंह जी श्री क्षत्रिय युवक संघ के शिविरों में सम्मिलित होकर संघ से बहुत प्रभावित हुए और संघ को उन्होंने अपने जीवन में अत्यधिक महत्त्व देकर संघ के उद्देश्य को ही अपने जीवन का उद्देश्य सर्वात्मना स्वीकार कर पूज्य श्री तनसिंह जी के निकटतम सहयोगी बन गये। संघ परिवार में 'मास्टर साहब' के नाम से जाने जाकर समाज में भी इसी नाम से विख्यात हुए।

सन् 1949 में चैपासनी आन्दोलन के समय पूज्य श्री तनसिंह जी व श्री आयुवान सिंह जी दोनों को एक साथ सामाजिक क्षेत्र में कार्य करने का अवसर मिला। दोनों अपनी सूझ-बूझ, कार्यकुशलता, दूरदर्शिता आदि से तथा मोहनसिंह जी भाटी, मेजर पदमसिंह जी, रामचन्द्रसिंह जी दहिया, रूपसिंह जी भाटी आदि के प्रमुख सहयोग से मारवाड़ के समस्त राजपूतों को इस आन्दोलन में सक्रिय करने में सफल हुए। आन्दोलन भी सफल हुआ और चौपासनी स्कूल को जिसे सैनिक स्कूल बनाने की सरकार की योजना थी, सरकार मारवाड़ राजपूत सभा को सौंपने के लिए विवश हो गई। ●

चरित्र निर्माण के चौबीस सूत्र

– **कृष्ण कुमार सिंह**

श्री मद्भागवत महर्षि व्यास रचित लोकोत्तर कल्याणकारी कृति है। महामना पं. मदनमोहन मालवीय के मुख से भागवत के कुछ अंश सुनने का अवसर मिला था, जिन्होंने उद्गार प्रकट किया था कि 'भागवत एक ऐसा ग्रन्थ है जिसे पढकर धर्मरस उत्पन्न किया जा सकता है।' धर्म का यहाँ अर्थ है 'करणीय कर्म' अथवा 'लोक मंगलकारक चारित्रिक उपादानों का समन्वय।'

उसी श्रीमद्भागवत में राजा यदु का अवधूत-शिरोमणि दत्तात्रेय से अचानक भेंट होने का प्रसंग आता है। दत्तात्रेयजी के व्यक्तित्व से अभिभूत होकर राजा यदु ने उनकी करबद्ध स्तुति की और कहा-"ब्रह्मम्! आप कर्तापन के अभिमान से रहित हैं। मैं देख रहा हूँ कि आप कर्म करने में समर्थ, विद्वान और निपुण हैं। संसार के अधिकतर लोग काम और लोभ के दावानल से जल रहे हैं। परन्तु आपको देखकर ऐसा मालूम होता है कि आप तक उसकी आँच नहीं पहुँच पाती। आप कृपापूर्वक इसका रहस्य बतलाइये।"

सांसारिक कर्मों की गहनता से पूर्णतया अवगत ब्रह्मवेता दत्तात्रेय जी ने राजा यदु से जो कुछ कहा, वह चारित्रोत्थान की दृष्टि से अनुपम तथा सर्वथा उपादेय है। दत्तात्रेय जी ने यदु को बतलाया कि उन्होंने अपने जीवन यापन काम में पंचभूतों तथा छोटे-बड़े प्राणियों की स्वाभावगत चेष्टाओं में कुछ की उपयुक्तता को लक्ष्य किया और उन्हें तत्काल ग्रहण कर लिया। इस प्रकार उन्होंने अपना जीवन संवारने में सफलता प्राप्त की।

आज जब संसार चारित्रिक पतन की ओर द्रुतगति से अग्रसर हो रहा है और प्राणिमात्र इसके दुष्परिणाम स्वरूप विनाश के कगार पर जा खड़ा हुआ है तो दत्तात्रेय जी द्वारा इंगित चौबीस सूत्रों की ओर बरबस ध्यान चला जाता है। प्रतिक्षण दुर्दान्त काल से हमारा सामाजिक साक्षात्कार होता चला जा रहा है; उसमें अपने उद्धार के लिए इन सूत्रों का अविकल भाव से ग्रहण करना अनिवार्य हो गया है। चलें हम उन्हें समझें।

दत्तात्रेय जी ने पृथ्वी को देखकर धैर्य और क्षमा जैसे गुणों की महत्ता समझ ली और उन दोनों गुणों को अपने चरित्र का अंग बना लिया। देखते तो सभी हैं, परन्तु दृष्टव्य कार्य व्यापार का गूढार्थ दत्तात्रेय जी को ही समझ में आया। पृथ्वी अपनी छाती पर अहोरात्र विचरने वाले और उस पर अनेक आघात करने वाले किसी प्राणी से बदला कभी नहीं लेती; न तो अपना धीरज खोती है, न कभी क्रोध ही करती है। दत्तात्रेय जी की समझ में यह बात आ गई कि प्राणी के अस्तित्व की सार्थकता इसी में है कि वह दूसरों का हित करने में सदा-सर्वदा संलग्न रहे। क्षमा के लिए तो पृथ्वी अद्वितीय आदर्श ही है। आदर्श चरित्र श्रीराम के लिए- '**क्षमया पृथिवी समः**' कहा गया है।

वायु की गति सर्वत्र है। सद्-असद् सभी प्रकार की वस्तुओं से उसका सम्पर्क होता है, पर वह किसी के प्रति आसक्त नहीं होती। गन्ध भी वायु का गुण नहीं है; वायु तो मात्र उसकी वाहक है। निरासक्त, निर्लिप्त रहते हुए गतिशील रहना ही वायु के समान हमारी नियति होनी चाहिए।

आकाश की अखण्डता का मर्म ग्रहण करते हुए मानव के लिए उचित है कि वह जीवन एवं जगत को टुकड़ों के रूप में न देखे। अखण्डता का अर्थ यह हुआ कि मनुष्य अपने को क्षुद्र सीमाओं में न बांधे।

जल की भांति शुद्धिकारक, स्निग्ध और शीतल रह कर अपने सम्पर्क में आने वाले सभी प्राणियों को इन गुणों से युक्त करने का हमारा ध्येय होना चाहिए।

अग्नि की भाँति शुभ कर्मों को उत्तेजित करने तथा अशुभ कर्मों को भष्म पर देने की हमारी प्रवृति होनी चाहिए। दत्तात्रेय जी को यह बात समझ में आई।

चन्द्रमा की घटती-बढ़ती कलाओं को देखकर यह

स्पष्ट हो जाता है कि कालचक्र में एकरूपता अथवा एकरसता नहीं है। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जीवधारियों के आकार और शक्ति में जो वृद्धि और ह्रास परिलक्षित होता है, उसे समझने के लिए चन्द्रमा को देखना चाहिए और साधन की न्यूनता या वृद्धि के अनुसार सतत् कार्यरत रहना चाहिए। घटती-बढ़ती को समान धर्म के रूप में लेना चाहिए।

सूर्य जैसे जल को सोखकर समय पर पुनः उसे प्राणियों के कल्याण हेतु वर्षा के रूप में दान कर देता है, उसी प्रकार ग्रहण की सार्थकता तभी है जब गृहीत वस्तु के त्याग प्रवृति भी साथ ही जुड़ी रहे। दत्तात्रेय जी ने उपर्युक्त दोनों तथ्यों को चन्द्र और सूर्य के माध्यम से हृदयंगम किया। हमें भी हृदयंगम करना चाहिए। तभी चरित्र की श्रृंखला बढ़ेगी।

एक कबूतर को अपने पारिवारिक मोहजाल में पड़कर अपने प्राण गंवाते देखा तो दत्तात्रेय के ध्यान में यह बात आई कि अतिशय लिप्तता से विवेक बुद्धि नष्ट हो जाती है; अत: आत्यन्तिक मोह से बचने में कल्याण है। मोह-ममता से सर्वथा नहीं तो उसकी आत्यन्तिकता से तो बचना ही चाहिए।

अजगर जैसे आलसी प्राणी से अवधूताचार्य दत्तात्रेय जी ने संतोष-वृति की सीख ली। समुद्र को देखकर उन्होंने सदा गुरु गंभीर, अविचलित रहने का भाव अपनाया। समुद्र का गांभीर्य भी उदात्त चरित्र श्री राम की गंभीरता का उपनाम बना है- **समुद्र इव गाम्भीर्य**।

फिर दत्तात्रेय जी ने पतंगे को दीप-शिक्षा पर आकृष्ट होकर जलते-मरते देखा तो वे जान गये कि विषय भोगों के चाकचिक्य पर लपकने से विनाश निश्चित है। अतः वह त्याज्य है।

मधुप-वृति से भी दत्तात्रेय जी ने सीखा कि भौरों की तरह जहाँ भी उयादेय कल्याणकारी तत्त्व मिलें, उन्हें बटोर लेना चाहिए। उन्होंने देखा कि अतिशय संचय के कारण भौरों का मधु लुट जाता है। उसी तरह घोर कार्पण्य से बटोरा धन भी वञ्चकों के हाथ लग जाता है, संचय कर्ता के काम नहीं आता। मधु संग्राहकों द्वारा सयत्न उतारे गये मधुरस के भोग का पूर्वाधिकार अतिथियों, अभ्यागतों को मिलता है। अतः अपने चरित्र के निर्माण में अतिवस्तु-संग्रह नहीं करना चाहिए।

हाथी जैसे विशाल जीव को विषय-भोग के क्षणिक सुख की आशा में बन्धनग्रस्त होते देख ऐन्द्रिक वासनाओं के त्याग की शिक्षा दत्तात्रेय जी को मिली। ऐन्द्रिक वासना अतिमात्रा में विष बन जाता है। गो स्वामी जी ने कहा है-

तुलसी राम ने पाइये, भये विषय-जल मीन।

कर्णेन्द्रिय को प्रिय, मधुर ध्वनि सुनकर उसकी ओर आकृष्ट होने वाले हिरण सहज ही शिकारी के बाण से विद्ध हो जाते हैं। अतएव ऐन्द्रिक सुख की छलना से बचने की एक और शिक्षा दत्तात्रेय को मिली।

जिह्वा को वश में न रखने के कारण मछली कांटे में लगे मकोड़े की ओर लपकती है और अपने प्राण खो बैठती है। स्वाद-लोलुप्ता से बचकर आत्म रक्षा करने की सीख दत्तात्रेय जी को इस प्रकार मिली।

मांस का टुकड़ा चोंच में दबाकर उड़ता कुरर पक्षी अन्य समर्थ पक्षियों द्वारा लगातार छीन झपट्टा दुख सहता रहा। त्रस्त होकर जैसे ही उसने अपने मुँह का ग्रास नीचे गिराया कि उसे मानसिक शान्ति मिल गयी। सुख-शान्ति की कुंजी अपरिग्रह में है, दत्तात्रेय जी ने कुरर पक्षी से यह मंत्र सीखकर गांठ बांध ली। गीता कहती है- **त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्**।

राग और विराग का भेद तो विदेह नगरी की वेश्या ने विस्तार से बताया। रूप का व्यापार करने वाली उस वारागंना को अन्ततः इन्द्रियों का संयम करने पर ही शान्ति मिली, सुख मिला। जब वेश्या को संयत होने पर शान्ति मिल जाती है तो साधारण व्यक्ति को निराश होने का कोई कारण नहीं है। पर चरित्र सबेर बनाया जाए तो उत्तम है। सांझ में चरित्र क्या बनेगा।

वर पक्ष के लोग एक कुमारी कन्या को देखने गये। परिवार के लोग उस समय बाहर गये हुए थे। अतिथि-

परायणा कुमारी उनके सत्कार हेतु अपने आँगन में बैठकर ओखल में चावल कूटने लगी तो उसकी कलाई की चूड़ियाँ बजने लगी। आवाज बाहर न जाए, यह विचारती हुई कन्या ने अपनी दोनों कलाइयों में एक-एक चूड़ी छोड़कर बाकी सब तोड़ डाली। सूक्ष्म द्रष्टा दत्तात्रेय जी के मन में विचार आया, बहुसंख्यक का एक स्थान पर एकत्र होना कलह-कोलाहल का कारण बनता है। भीड़ अनर्थ का मूल हो जाती है। भीड़ की कोई आचार संहिता भी नहीं है। अत: व्यक्ति का चरित्र साधनीय होता है।

बाण बनाने वाले एक कारीगर को आत्मकेन्द्रित होकर अपने काम में तल्लीन और सामने से धूमधाम के साथ निकलती राजा की सवारी की ओर से लापरवाह देखा तो दत्रात्रेय जी ने तन्मयता की कीमत आंक ली। ऐसी अवस्था में सत्वगुण का उदय होने के साथ ही तमोगुण का क्षय स्वत: हो जाता है, यह बात सहज ही उनके सामने प्रत्यक्ष हो गई। इसकी साधना मनो निग्रह से हो सकती है।

सांप को निशब्द सरकते देखा तो मौन रहने के गुण स्पष्ट हो गए। बहुत कम बोले, यथाशक्ति किसी की सहायता न ले और पिछलगुओं से बचकर स्वान्त-सुखाय विचरण करे, दत्तात्रेय जी ने सर्प से यह शिक्षा चटपट ग्रहण कर ली।

मकड़े को जाला बुनते-बिगाड़ते देखा तो दत्तात्रेय जी को जन्म-मरण के चक्कर और मायामोह के ताने-बाने का स्मरण हो गया। दैहिक नश्वरता के साथ ही सर्व नियामक शक्ति के मूलाधार परमात्मा की लीला की झलक उन्हें मिल गई। अत: अहं मूलक अहंकार को और जड़वाद को परिहेय समझ लिया। इस तथ्य को समझने से जीवन को संयत करने की प्रेरणा मिलती है।

आत्मा का परमात्मा में समाहित होने, एकाकार होने की प्रक्रिया का उदाहरण दत्तात्रेय जी को भृंगी कीट के कार्यकलापों में मिल गया। भृंगी जिस प्रकार एक नाम रूपहीन कृति को अपने बिल में कुछ समय तक बंद कर उसे अपने ही जैसा बना लेता है, उसी प्रकार परमतत्व का एकान्त चिन्तन करने से मनुष्य भी तद्रूप हो जाता है। ब्रह्म का विवर्त विश्व तत्त्वत: ज्ञात हो गया।

अब दत्तात्रेय जी ने स्वयं अपने शरीर को ध्यान से देखा और पाया कि उनकी इन्द्रियाँ अपने-अपने अभीष्ट पदार्थों को लेकर आपस में बराबर खींचातानी करती रहती है। आसक्ति और अहंकार के झंझावत अलग से झकझोरते हैं। शरीर नश्वर तो है ही। ऐसी स्थिति में प्रमाद त्याग कर मनुष्य को अविनश्वर तत्त्व की खोज में प्रवृत होना चाहिए। संकुचित स्वार्थों का त्याग करते हुए सार्वकालिक परमार्थ में मन को केन्द्रित करना चाहिए, जिसके अन्त में शाश्वत शान्ति एवं मुक्ति। जीवन के चारित्र्य की यह सीढी बहुत ऊपर की है।

परम तत्त्वज्ञानी दत्तात्रेय जी ने राजा यदु के सामने सारे तथ्य इस प्रकार संजोकर रखे कि मानव जीवन के उद्देश्य तथा आदर्श जीवन यापन के लिए सर्वाधिक उपर्युक्त आचरण-पद्धति आइने की तरह उनके सामने झलक उठी।

आज तक इस देश में और अन्यत्र भी, जितने चिंतक, विचारक और मनीषी हुए हैं, सब ने उन्हीं सारवान तथ्यों को किसी न किसी रूप में दोहराया है। सारांश यह है कि मनुष्य को अपनी सभी ज्ञानेन्द्रियों को इस प्रकार खुला रखना चाहिए कि द्रष्टव्य वस्तुओं और घटनाओं में निहित स्वर अनायास दिखाई पड़े। तभी उसका उपयोग चारित्रिक उन्नयन के लिये कर सकता है।

आज अपने यहाँ सर्वोपरि आवश्यकता इस बात की है कि क्षणिक सुख देने वाले विषय-वासनाओं को त्याग कर अपने भीतर पल रहे अहंकार को उपेक्षित किया जाए एवं स्वार्थ के स्थान पर परमार्थ का वरण किया जाए। वर्तमानकाल में सर्वव्यापी चारित्रिक स्खलन को रोकने के लिये हमें ऋषि दत्तात्रेय द्वारा उद्घाटित चौबीस सूत्रों का सहारा लेना चाहिए। हमारा मंगल इसी में निहित है। इन शिक्षाओं का मनन कर हम मांगल्य प्राप्त कर सकते हैं।

बिना करनी के सोचते रहना ही कदाचित पाप है। – डॉ. हजारी प्रसाद

समर्पण स्थल रक्त तलाई

– डॉ. मातुसिंह मानपुरा

इतिहास के पृष्ठों में अनेक युद्धों का वर्णन है। यहाँ के योद्धा बलिदान देने की प्रतिस्पर्धा की अग्रिम पंक्ति में रहे हैं। मरुभोम में तो 'मरणां नूं मंगल गिणै' भाव के साथ 'हरावळ' में रहने की इच्छा के लिये भी बलिदान हुये हैं। यह ऐतिहासिक सत्य है कि भारत भूमि पर आक्रमण करने वाले विधर्मी सेनापति कभी भी सेना के अग्रभाग में नहीं रहे और क्षत्रिय शासक या सेनापति कभी भी मध्य भाग में नहीं रहे। विदेशी इतिहासकार का यह लिखना कि 'राजपूत लड़ना नहीं, मरना जानते हैं' युद्धनीति की समीक्षा के हिसाब से तो सही है लेकिन मरने के अवसर को हाथ से नहीं जाने देने के सिद्धांत ने सर्वमान्य रूप धारण कर लिया था। 'पग-पग सूरां देवळी, पग-पग सतियां ठोड़' वाली इस धरा पर युद्ध मैदानों की कमी नहीं है लेकिन जैसा त्याग व समर्पण का भाव हल्दीघाटी की रक्त तलाई पर देखने-सुनने को मिला ऐसा उदाहरण विश्व के इतिहास में मिलना दुर्लभ है।

भारत भूमि की आन-बान-शान के प्रतीक मेवाड़ महाराणा प्रताप सिंह मुगल बादशाह के साथ समझौता करने को तैयार नहीं थे। दबाव, आक्रमण व उच्च स्तर के प्रयासों के उपरान्त कुंठित, अपमानित मानसिकता के वाहक दिल्ली के बादशाह अकबर की सेना ने 18 जून, सन् 1576 को मेवाड़ पर आक्रमण किया। मुगल सेना ने मांडलगढ़ से चलकर नाथद्वारा के निकट खमनोर गाँव के पास वर्तमान शाही बाग के नाम से प्रचलित स्थान पर पड़ाव लगाया। मेवाड़ धरा की इस घाटी में छोटी-छोटी पहाड़ियाँ, दर्रे और उसमें मोर्चा लिये मेवाड़-भूमि निवासी सभी जाति-धर्म के सैनिक तथा अपनी मजबूत भील सेना के साथ राणा पूंजा सोलंकी भी सेना के अग्रभाग में उपस्थित था। मातूभूमि के सीमित रक्षकों व तोपों से सुसज्जित मुगल सेना के मध्य तुमुल युद्ध हुआ। मेवाड़ी सेना के भील तीरंदाजों एवं उत्साही वीरों ने कुछ ही समय में मुगल सेना को लगभग दो किलोमीटर पीछे धकेल दिया। आक्रांताओं के पैर उखड़ गये लेकिन उसी समय एक अफवाह उड़ाई गई कि मुगल बादशाह अकबर भारी सेना के साथ स्वयं युद्ध मैदान में पहुँच गया है। मुगल सेना ने अपनी तोपों को व्यवस्थित किया तथा घुड़सवारों को अग्रभाग में लड़ने का आदेश दिया। साहसी मेवाड़ी सेना सुरक्षित पहाड़ी मोर्चों को छोड़कर मुगल सेना पर टूट पड़ी। मेवाड़ की प्रतिष्ठा के लिये समर्पित ग्वालियर के पूर्व शासक रामशाह तंवर एवं उनके पुत्र-पौत्र इस युद्ध में काम आये। तीन पीढ़ी एक साथ युद्ध में आत्म बलिदान करना समर्पण का सबसे बड़ा उदाहरण है। युद्धोपरान्त स्वाभिमान की रक्षा के लिये समर्पित योद्धा रामशाह तंवर की छतरी का निर्माण हुआ तथा वि.सं. 1681 में महाराणा कर्ण सिंह ने इनके पुत्र शालिवाहन की छतरी का निर्माण करवाया।

पहाड़ की तलहटी में स्थित इस कंकरिली घाटी में लाशों के ढेर लग गये लेकिन स्वधर्म का पालन करने वाले योद्धाओं ने पीठ नहीं फेरी, खून पानी की तरह बहकर इकट्ठा हो रहा था। मेवाड़ी मुकुट धारण किये हुये स्वाभिमान के रक्षक महाराणा प्रताप एवं उनके सहयोगी योद्धा मुगल सेना को गाजर-मूली की तरह काटते हुये आगे बढने लगे लेकिन आक्रान्ताओं के बढ़ते दबाव के कारण प्रताप मुगल सेना से घिर गये। मृत्यु के साक्षात तांडव नृत्य के बीच बड़ी सादड़ी के जागीरदार झाला मानसिंह तुरन्त आगे बढकर महाराणा के पास पहुँचे एवं निवेदन किया- 'मेवाड़ को स्वाभिमानी संघर्ष प्रिय प्रताप की आवश्यकता है, गौरवशाली राजचिन्हों से मण्डित इस मुकुट को मैं धारण

(शेष पृष्ठ 20 पर)

सकरात्मकता के साथ आगे बढ़ें

– रश्मि रामदेरिया

''जब तुम जीवन की लहरों के बीच तूफान में घिर जाओ, जब तुम्हें यह कहकर हतोत्साहित किया जाए कि सब कुछ खो चुका है अपने अनेक आशीर्वादों को गिनो, एक-एक करके उनका नाम लो, तुम यह देखकर आश्चर्यचकित हो जाओगे कि ईश्वर ने क्या-क्या किया है।''

हमें सबसे कमजोर स्थितियों में भी सकरात्मकता खोजनी चाहिए। उसी के साथ जीवन यापन करना चाहिये। समस्याओं को निपटाते समय हमारी मानसिक स्थिति अनिवार्यत: सकरात्मक होनी चाहिए। सोचिये : मैं जिस परिस्थिति में हूँ क्या उसमें कुछ सकरात्मक भी है? सकरात्मक होने का यह अर्थ नहीं है कि हम नकारात्मकता को नजरअंदाज करें। हमें रचनात्मक तरीके से सकरात्मकता पर नजर रखते हुए, नकरात्मकता से निपटना चाहिये। कृतज्ञता जीवन की वह स्थिति है जो हमें सकरात्मकता को देखना सिखाती है। यह इस अनुभूति के माध्यम से हम तक आती है कि संसार में अच्छाई है, उसमें से कुछ अच्छी चीजें हमारे साथ हैं और वे अच्छी चीजें बाहरी सत्य से आ रही हैं। चेतना की वह अवस्था हमें सकरात्मकता से जोड़ देती है। यहाँ तक कि कठिनाइयों और दु:खों के समय में भी हम अपनी आंतरिक शक्ति अनुभव कर सकते हैं; ऐसा तब होता है जब हम मित्रों और परिवारजनों की सहायता और सहयोग के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

प्रेम के भावों की मैं तो बेल बढाऊँगा
भूले हों भटके हों चाहे गले से लगाऊँगा,
अजब नशे से मेरी भरी है सुराही
कोई सराहे कोई बने हमराही
मैं तो बना रे सिपाही।।

सकरात्मक सोच या आशावादी होना किसी भी स्थिति में अच्छे पर ध्यान केन्द्रित करने का अभ्यास है। इसका हमारे मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर बहुत प्रभाव पड़ सकता है। "Always think positive & be optimistic"

हमें सदैव अपने अंदर से खुश रहने का प्रयास करना चाहिये। खुश होने के लिये किसी कारण या मौके की तलाश करने की जरूरत नहीं है। अपने भीतर यह तय करना होगा कि जो चीज जैसी है, हम उसे उसी रूप में देख पाएँ। हमेशा प्रयत्न करें अच्छा सोचने का, अपने देखने का नजरिया बदलें, शिकायत ना करें, ना व्यक्ति से ना परिस्थितियों से, परेशानी को ही देखते रहने से अच्छा है इसका हल क्या हो सकता है यह सोचें। स्वयं आत्मचिंतन करेंगे तो अंतरमन से जवाब भी मिलेगा लेकिन उसके लिए मन को हर परिस्थिति में शान्त रखने का प्रयास करना होगा। हमेशा मन से हँसते मुस्कुराते रहें, सिर्फ बाहरी हँसी ना हँसे। अपने दिन की शुरुआत ध्यान, व्यायाम से करें। स्वयं के साथ दूसरों को भी प्रोत्साहित करने का प्रयत्न करें। अपनी एक दिनचर्या केवल बनाए ही नहीं, उस पर चलने की कोशिश करें। यदि कोई नकारात्मक विचार हमारे मन में आते हैं तो तर्कसंगत रूप से उसका मूल्यांकन करें और जो अच्छा है उसकी पुष्टि के साथ जवाब दें। एक ही बात को बार-बार सोचने से हम परेशानी को दूर ना करके उसमें उलझ जाते हैं। जब हम उदास, क्रोधित या दूसरों के प्रति घृणा, द्वेष, जलन महसूस करते हैं तो हमारे मन में वैसे ही नकारात्मक विचार और भाव उत्पन्न होते हैं। इससे स्ट्रेस हार्मोन (Stress Hormones) उत्पन्न होते हैं, जो शारीरिक उत्तेजना का कारण बनते हैं। हाई ब्लड प्रेशर, हाई पल्स रेट आदि नकारात्मक सोच के ही लक्षण हैं। अपनी लाइफ स्टाइल में बदलाव लायें, किताब, साहित्य, रामायण के कुछ दोहे नियमित रूप से पढ़ें, गीता जी का एक अध्याय रोज पढ़ें, मधुर संगीत सुनें, नाम जप करके अपने आपको हमेशा चार्ज रखें, घूमने जाएँ, अपनों के साथ समय बितायें, नई चीजों को सीखने में मन लगाएँ, अत: हमें अपने विचारों के प्रति पूर्ण सजग हो जाना है।

''सकारात्मक सोच संग उत्साह और उल्लास लिए,
जीतेंगे हर हारी बाजी मन में यह विश्वास लिए।''

अध्यात्म की शक्ति

– आचार्य महाप्रज्ञ

अध्यात्म की यात्रा भीतर की यात्रा है। अध्यात्म में दो शब्द हैं-अधि + आत्मा । 'अधि' का अर्थ है- भीतर। अध्यात्म का अर्थ है- आत्मा के भीतर। आत्मा के बाहर-बाहर हम यात्रा कर रहे हैं, अतीत से करते रहे हैं। बाहर ही बाहर, बाहर ही बाहर। कभी भीतर जाने का अवकाश ही नहीं मिला। हमें सब कुछ वही अच्छा लगता है, जो बाहर है। हम मानते हैं कि दुनिया में जो कुछ सार है, वह बाहर ही है, भीतर कुछ भी नहीं। बाहर सार है और भीतर वह है जो सार को भोगता है। सार को करने वाला, लेने वाला, ग्रहण करने वाला भीतर है, परन्तु भीतर में कोई सार नहीं है। यदि भीतर में सार होता, तो बाहर से सार लेने की आवश्यकता होती? भीतर में सार नहीं है, असार है, इसीलिए हम बाहर से सार लेकर भीतर भेजते हैं। यही हमारा अनुभव है। इसी अनुभव के कारण हम भीतर में असार मानते हैं और बाहर में सार मानते हैं। हमने खोज शुरू की कि सार साक्षात् हो सके । बाहर के कण-कण में सार को खोजा, खोजते रहे हैं। आज भी खोजते हैं।

हमने जब से भीतर की यात्रा शुरू की, अध्यात्म की यात्रा शुरू की, अपने भीतर चलना प्रारम्भ किया, भीतर देखना शुरू किया, तो सारी मान्यता बदल गयी । आज तक का अनुभव परिवर्तित हो गया। 'बाहर में सार है'- यह सर्वथा मिथ्या लगने लगा। 'भीतर में सार है'- यह सर्वथा सत्य प्रतीत हुआ । अनुभव की चिनगारियाँ उछली, स्फुलिंग बिखरने लगे और तब अनुभव हुआ कि जो कुछ सार है, वह भीतर है, बाहर निस्सार ही निस्सार है। भीतर का सार इतना है कि बाहर का सार नगण्य है, तुच्छ है। भीतर सार का समुद्र लहरा रहा है और बाहर सार की दो-चार बूंदें बिखरी-सी लगती हैं। कहाँ भीतर में विद्यमान सार का अतुल भण्डार और कहाँ बाहर में पड़ा निस्सार का अंबार! दोनों की कोई तुलना नहीं हो सकती। जो सार बनाता है, सार की अनुभूति कराता है, जो सार को मूल्य देता है, वह तो भीतर है। अगर भीतर वाला सो जाए, तो सारा सार असार हो जाए, सारा सार्थक निरर्थक बन जाए । सार बनाने वाला, सार का मूल्यांकन करने वाला, सार को स्थान देने वाला जो है वह परमात्मा, वह देवता भीतर बैठा है, बाहर नहीं है।

आज के धार्मिक लोगों ने अध्यात्म यात्रा को भुला दिया, इस महापुण्य यात्रा को विस्मृत कर दिया। उन्होंने लोगों को सिखाने का प्रयत्न किया-भले आदमी बनो, स्वार्थ को छोड़ परमार्थ में प्रवेश करो, प्रामाणिक बनो, नैतिक बनो, शुद्ध आचरण करो, सबके साथ मैत्री करो, अहिंसा का पालन करो, चोरी मत करो, सन्तुष्ट रहो । ये बातें अच्छी हैं। इनको चाहना अच्छा है। किन्तु ये उपदेश चलते रहे और आदमी मूल का ही रहा। उसमें कोई रूपान्तरण नहीं हुआ। उपदेश उपदेश मात्र बना रहा। बात यह है कि जब तक परिवर्तन की प्रक्रिया सामने नहीं आती, क्रियान्विति का उपाय सामने नहीं आता, तब तक कहने वाला कहता है और न सुनने वाला सुनता रहता है। दोनों नहीं थकते। न कहने वाला थकता है न सुनने वाला थकता है। यह भी मन-बहलाव का साधन बन जाता है। इस प्रकार के उपदेशों से कोई परिवर्तन नहीं होता।

उपदेश की भी एक सीमा है। जब तक आदमी उस तथ्य को नहीं समझता, तब तक उपदेश उपयोगी है। जब व्यक्ति इस बात को जान लेता है, फिर उपदेश का काम समाप्त हो जाता है। फिर तो वे व्यक्ति अपने उपायों को काम में लें। उनके आधार पर अपनी यात्रा शुरू करें, चलते रहें। मंजिल तक पहुँच जाएँगे। मैं समझता हूँ कि जो लोग उपदेश की सीमा को ठीक जानते हैं और उपदेश की सीमा समाप्त

होने पर उपायों की सीमा को जानते हैं, वे सही मार्ग को जान लेते हैं।

अध्यात्म की साधना एक निरालंब मार्ग है। अध्यात्म स्वंय निरालंब है। वहाँ किसी आलंबन या सहारे की जरूरत नहीं है। अध्यात्म में किसी आलंबन की अपेक्षा नहीं है, किंतु अध्यात्म में पहुँचने के लिए आलंबन आवश्यक है, सहारा खोजना होता है। अध्यात्म की यात्रा करने वालों ने, मन पर अनुशासन करने वालों ने, आलंबनों को खोजा है। अध्यात्म-साधकों ने नाना आलंबनों की शरण ली है। आलंबनों के बिना वहाँ नहीं पहुँचा जा सकता। बहुत जरूरी है आलंबन।

निरालंब तक पहुंचने में जिन आलंबनों की अपेक्षा है, उनमें संयम, तप, जप, शील, स्वाध्याय, अनित्य अनुप्रेक्षा, अशरण अनुप्रेक्षा, अनन्त अनुप्रेक्षा और निर्मल ध्यान- ये मुख्य हैं। इन आलंबनों का उपयोग किए बिना कोई भी साधक निरालंब तक नहीं पहुँच सकता। अशुद्ध आलंबनों को छोड़कर शुद्ध आलंबनों को स्वीकार करना-यह प्रथम नियम है। वासना अशुद्ध आलंबन है। चेतना शुद्ध आलबंन है। अशुद्ध आलंबनों को छोड़ना और शुद्ध आलंबनो का सहारा लेना-यह ध्यान की प्रक्रिया का मूल है। इसका तात्पर्य है कि कामकेन्द्र की ओर प्रवाहित होने वाली चेतना को ऊपर उठाकर ज्ञानक्रेन्द्र में ले जाना। नीचे के प्रवाह को बदलकर उसको ऊपर की ओर मोड़ देना। यह शुद्ध आलंबन की स्वीकृति है। यह प्रयत्न बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रयत्न है। इस प्रयत्न से सारी वृत्तियों का परिष्कार होता है। ●

पृष्ठ 17 का शेष

समर्पण स्थल रक्त तलाई

करना चाहता हूँ।' महाराणा कुछ जवाब देते उससे पहले ही झाला मानसिंह ने मुकुट अपने सिर पर धारण कर लिया और जयकारों के साथ चेतक की लगाम पकड़कर युद्ध मैदान से बाहर की तरफ कर दिया। मुगल सेना द्वारा मेवाड़ महाराणा के मुकुट को देखकर झाला मानसिंह पर चारों तरफ से प्रहार किया गया। सात पीढ़ी की परम्परा को कायम रखते हुये झाला कुलश्रेष्ठ ने अन्तिम श्वांस तक संघर्ष कर अपने प्राणों को न्यौछावर कर मेवाड़ के गौरवशाली मुकुट की लाज रखी। श्री जगदीश सिंह गहलोत ने अपनी पुस्तक 'राजपूताने का इतिहास' के पृष्ठ संख्या 235 पर लिखा है, 'उदयपुर के जगदीश मन्दिर के वि.सं. 1709 के शिलालेख से ज्ञात होता है कि इस युद्ध में महाराणा की जीत हुई।' भारतीय डाक विभाग द्वारा भी 18.6.2017 को सुभट झाला मानसिंह पर डाक टिकट जारी किया गया है। इस ऐतिहासिक घटना का तथ्यपूर्ण प्रश्न पूछता है कि क्या हमें भी वर्तमान परिस्थितियों में स्वधर्म पालन का प्रयास करना चाहिये? रक्त तलाई के योद्धाओं का समर्पण भाव स्तुत्य है। साक्षात खड़ी मौत को चुनौती देने वाले झाला मानसिंह के सुकृत्यों का चरित्र-चित्रण वीररस के सुप्रसिद्ध कवि नाथू सिंह महियारिया ने इस ऐतिहासिक दोहे के द्वारा किया है-

नवलक्यां न्यारौ लियो, रगत मान रौ हेर।
रछ्या कर नित राखस्यां, तिलक करांला फेर।।

●

जन्म के बाद से मनुष्य लगातार मृत्यु की तरफ बढता रहता है। बीच के ये दो दिन ही उसके कर्म के होते हैं। यह कर्म वह किस तरह करता है, इसी पर उसका मूल्यांकन किया जाता है।

- विमल मित्र

बप्पा रावल

– बाबा निरंजन नाथ

दो-दो अमर वंश वृक्षों के अमर जन्मदाता- बप्पा रावल। पंथ प्रवर्तक, दिग्विजयी बप्पा रावल। जिन पुण्य नामों के स्मरण मात्र से रक्त में ज्वार आ जाता है, सिर जिनकी स्मृति में श्रद्धा से झुक जाता है, ऐसे अनेक प्रातः स्मरणीय नामों में से एक नाम प्रमुख है- 'बप्पा रावल।'

1400 वर्षों तक देश की रक्षा का कीर्तिमान स्थापित करने वाले महान मेवाड़ वंश के आदि पुरुष 'बप्पा रावल'' का नाम लिखने मात्र से लेखनी धन्य हो जाती है, जिह्वा पवित्र हो जाती है, हृदय अमरता के उल्लास से भर जाता है और भुजाएँ फड़कने लगती हैं।

मुहम्मद बिन कासिम का 712 ईसवी में सिंध पर अधिकार हो चुका था। मुस्लिम लुटेरों ने उसके भी पश्चिम के भारत और मध्य एशिया में तो पहले ही कोहराम मचा रखा था।

अब सिन्ध के टूटने के बाद तो वे भारत की तत्कालीन राजधानी चित्तौड़गढ़ तक भी अपनी कार गुजारी दिखाने से बाज नहीं आते थे। ऐसे समय में 'बप्पा रावल' का अवतार हुआ। मानो भगवान का ही अवतार हुआ।

'बप्पा रावल' की कथा मरे हुओं में भी प्राण फूंकने वाली है। दो-दो अमर वंश वृक्षों के अमर जन्म दाता हैं स्वनाम धन्य 'बप्पा रावल'। एक महान मेवाड़ का महान 'महाराणा वंश' भौर दूसरा महान 'नाथ पंथ-सम्प्रदाय' का महान 'रावल पंथ।'

देश के स्वतंत्र होने तक 'बप्पा रावल' का वंश देश में 1400 वर्षों तक शासन करता रहा और नाथ पंथ की 'रावल शाखा' तो आज भी यशस्वी है ही।

'बप्पा रावल' ने समस्त छोटे-बड़े राज्यों को संगठित किया। आम जनता से उसका सीधा सम्पर्क था। वीरता और देशभक्ति का उसने जन-जन में संचार किया। चमत्कारिक गति से मुस्लिम लुटेरों को उखाड़ फैंका!

उन्होंने न केवल वर्तमान मेवाड़ को स्वतंत्र कराया अपितु इस्लामिक आक्रमणकारियों को पराजय पर पराजय देकर सिन्ध, बिलोचिस्तान, ईरान, इराक, तुर्किस्तान, अफगानिस्तान, काफरिस्तान अर्थात अफगानिस्तान और चित्राल के मध्य का दुर्गम प्रदेश, मध्य एशिया, चीनी तुर्किस्तान अर्थात् चीन का वर्तमान सिक्यांग प्रांत को भी मुक्त करा कर वहाँ हिन्दु पताका फहरा दी।

अंग्रेजी चश्मे से देखने वाले तथाकथित भारतीय इतिहासकारों को यह बात नहीं पचेगी। वे तो यही लिखते रहते हैं कि, भारत सदा हारता रहा है, मार खाता रहा है। भारत में भी कोई-कोई दिग्विजयी हुए हैं, यह तो वे जानते-मानते ही नहीं। आज का जितना भारत है उसके दुगने से भी अधिक क्षेत्र किसी ने पुनर्विजित किया, यह सब इन लोगों की कल्पना के बाहर है। महाभारत से पता चलता है कि यह सारा क्षेत्र पूर्व में भारत ही था। म्लेच्छों के अधिकार में आ गए उस क्षेत्र को फिर से भारत बनाने का कार्य 'बप्पा रावल' ने किया।

बप्पा रावल के संगठन कौशल, रणकौशल और सुदृढ साम्राज्य निर्माण की क्षमता का ही परिणाम है कि 712 ईसवी में आये मुहम्मद बिन कासिम के बाद से लेकर 1024 ईसवी तक तीन सौ से अधिक वर्षों तक किसी म्लेच्छ को अर्थात् मुस्लिम काफिर को भारत माता की ओर आँख उठाकर देखने का साहस ही नहीं हुआ।

इस्लाम मजहब के प्रवर्तक मुहम्मद साहब के दौहित्र 'हसन और हुसैन' को कर्बला में उनके परिवार जनों और सेवकों सहित निर्दयता-पूर्वक तलवार के घाट उतार देने वाले 'यजीद' को बप्पा रावल ने ही पराभूत कर भारत की सीमा के बाहर खदेड़ा था। बप्पा रावल ने न केवल

(शेष पृष्ठ 23 पर)

क्षत्रियत्व का आधुनिक परिप्रेक्ष्यः नेतृत्व, साहस और सेवा का सशक्त संगम

– जितेन्द्र सिंह देवली

भारतीय संस्कृति में क्षत्रिय का महत्त्व केवल एक योद्धा के रूप में नहीं, बल्कि एक समाज के संरक्षक, नेता और सेवा भाव से प्रेरित व्यक्ति के रूप में माना जाता है। ऐतिहासिक रूप से, क्षत्रिय वर्ग को धर्म, समाज, और राष्ट्र की रक्षा के लिए नियुक्त किया गया था। परंतु आज के समय में, जब समाज की संरचना और चुनौतियाँ बदल चुकी हैं, क्षत्रियत्व की परिभाषा को भी व्यापक और गहनता से समझने की आवश्यकता है।

नेतृत्व की भूमिका :

आज के समय में नेतृत्व का अर्थ केवल एक समूह या सेना का नेतृत्व करना नहीं है, बल्कि यह समाज को सही दिशा में मार्गदर्शन करने का नाम है। नेतृत्व का गुण किसी भी व्यक्ति की आंतरिक शक्ति, दृढ़ता, और नैतिकता पर निर्भर करता है। एक सच्चे नेता का कार्य केवल सत्ता की प्राप्ति नहीं होता, बल्कि अपने समाज की सेवा और उसे सशक्त बनाने की दिशा में अग्रसर करना होता है। इस संदर्भ में, एक क्षत्रिय को अपने आचरण और विचारों से समाज के लिए एक प्रेरणा स्रोत बनना चाहिए, जो अपने नेतृत्व से दूसरों को सशक्त और प्रेरित कर सके।

श्री क्षत्रिय युवक संघ इसी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करता है। यह संगठन युवाओं को न केवल नेतृत्व के गुणों में प्रशिक्षित करता है, बल्कि उन्हें समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी का भी बोध कराता है। संघ के द्वारा आयोजित विभिन्न कार्यक्रम और शिविर, युवाओं में आत्म-विश्वास, संगठन कौशल, और नेतृत्व क्षमता को विकसित करते हैं।

साहस और आंतरिक दृढ़ता :

साहस केवल युद्धभूमि पर दिखाए जाने वाली वीरता तक सीमित नहीं होता। आज के परिप्रेक्ष्य में, साहस का अर्थ है अन्याय, असमानता और सामाजिक बुराइयों के खिलाफ खड़े होना। एक सच्चे क्षत्रिय का साहस उसकी आंतरिक दृढ़ता और सच्चाई के प्रति उसकी निष्ठा में निहित होता है। चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन क्यों न हों, एक सच्चा क्षत्रिय अपने नैतिक मूल्यों और सिद्धांतों पर अडिग रहता है और समाज की भलाई के लिए अपने कर्तव्यों का पालन करता है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के कार्यकर्ता इस साहस के प्रतीक हैं। संघ ने अपने स्वयंसेवकों को ऐसे तैयार किया है कि वे समाज में व्याप्त बुराइयों, अन्याय, और भ्रष्टाचार के खिलाफ मजबूती से खड़े हो सकें। संघ का उद्देश्य है कि हर सदस्य अपने जीवन में साहस को अपनाए और समाज के समक्ष एक आदर्श प्रस्तुत करे।

सेवा का भाव :

क्षत्रियत्व का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू सेवा का भाव है। यह सेवा केवल युद्ध में जीत के रूप में ही नहीं होती, बल्कि यह समाज के कमजोर वर्गों की मदद, शिक्षा का प्रचार-प्रसार, और समाज के हर व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में कार्य करना होता है। एक सच्चा क्षत्रिय वह है, जो समाज की सेवा को अपना परम धर्म मानता है और अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर समाज की भलाई के लिए कार्य करता है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ इस सेवा भाव का अनुसरण करता है। संघ के माध्यम से युवा वर्ग समाज सेवा के विभिन्न आयामों में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं। चाहे वह

रक्तदान शिविर हो, सफाई अभियान हो या समाज के पिछड़े वर्गों की सहायता, संघ ने सदैव यह सुनिश्चित किया है कि उसके सदस्य समाज के हर हिस्से में अपनी सेवाएँ प्रदान करें।

आज के संदर्भ में क्षत्रियत्व का व्यवहार :

आज जब समाज को नए प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, क्षत्रियत्व के व्यवहार को पुन: समझने की आवश्यकता है। क्षत्रिय वह है, जो अपने जन्म से नहीं, बल्कि अपने कर्मों से पहचाना जाता है। वह समाज में हर व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा करता है, हर प्रकार की अन्यायपूर्ण व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाता है और एक सशक्त समाज के निर्माण में योगदान देता है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ इस आधुनिक क्षत्रियत्व के व्यवहार का जीवंत उदाहरण है। संघ के सदस्य अपने जीवन में इन मूल्यों को अपनाते हुए समाज के उत्थान के लिए कार्यरत हैं। वे न केवल अपने व्यक्तिगत जीवन में आदर्श प्रस्तुत करते हैं, बल्कि समाज को भी सशक्त और संगठित करने के लिए प्रेरित करते हैं।

विचारणीय :

क्षत्रियत्व एक जिम्मेदारी है, जिसे सही रूप में निभाने के लिए न केवल शारीरिक शक्ति की, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति की भी आवश्यकता होती है। आज के समय में, जब समाज को सशक्त नेतृत्व की आवश्यकता है, सच्चे क्षत्रिय को अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए और समाज के विकास में अपना योगदान देना चाहिए। इस प्रकार, क्षत्रियत्व केवल एक पहचान नहीं, बल्कि एक जीवन जीने का तरीका है, जो समाज, राष्ट्र, और मानवता के प्रति अपनी निष्ठा और सेवा भाव को समर्पित करता है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ इस विचारधारा का सशक्त प्रतिनिधि है, जो आज के समय में क्षत्रियत्व के शुद्ध व्यवहार को जीवंत रखे हुए है। संघ के माध्यम से युवा समाज को नई दिशा, साहस, और सेवा का मार्ग दिखा रहे हैं। ●

पृष्ठ 21 का शेष

बप्पा रावल

आक्रमणकारियों को बाहर खदेड़ा अपितु राष्ट्र की सुरक्षा की भी सुदृढ व्यवस्था की। दूर-दूर के देश, विदेशों को म्लेच्छों-काफिरों से मुक्त कराया। आज हम पाकिस्तान से भी अपने को सुरक्षित रखने में कठिनाई अनुभव कर रहे हैं। बप्पा रावल की छत्र-छाया में सम्पूर्ण पश्चिम एशिया, मध्य एशिया और पूर्व एशिया सुरक्षित था।

जो लोग लुटेरों के दबाव में मुसलमान बन गये, उनको फिर से हिन्दु बनाने का महान अभियान चलाकर राष्ट्र को भीतर से भी सुरक्षित रखने की इस दूर-दृष्टि का परिचय भी बप्पा रावल ने दिया। बप्पा रावल की इस दूर-दृष्टि से हम आज भी लाभ ले सकते हैं।

अपना कर्तव्य सम्पन्न हुआ, ऐसा सोचकर वे नाथ साधु बन गए। आज के नेताओं के समान बेटे, पोतों के लिए धन बटोरने में नहीं लगा रहा बप्पा रावल। बप्पा रावल से यह शिक्षा लेने वाला तो आज कोई दीखता ही नहीं।

नाथ सम्प्रदाय की प्रसिद्ध रावल पंथी शाखा के आदि प्रवर्तक स्वनामधन्य बप्पा रावल ही हैं। पाकिस्तान स्थित 'रावलपिण्डी' शहर बप्पा रावल का ही बसाया हुआ है। बप्पा रावल की समाधि काबुल में बताई जाती है। अब वहाँ जाना कठिन हो गया है। शायद इसीलिए एकलिंगनाथ जी के पास बप्पा रावल की तपस्थली ही समाधि घोषित की हुई है।

राष्ट्र रक्षक, पंथ प्रवर्तक, दिग्विजयी बप्पा रावल की जय।

ढोंग-धतूर

– युधिष्ठिर

अगर कोई चाह है तो माया जीवित है। जब माया की असलियत पता चल जाती है तो कोई इच्छा भी नहीं होती है क्योंकि पता चल जाता है खाली-फोकट गोबर में हाथ घुमाने से कोई फायदा नहीं है क्योंकि कुछ मिलना तो है ही नहीं। हम यह जानते ही नहीं जिस दुनिया को हम देख रहे हैं वह सच है ही नहीं। सच तो कुछ और है।

माया की बहुत सारी व्याख्या है। सरल बात तो यह है कि संसार ही माया है। फिर मन माया है। फिर चाह माया है। चाह और संसार एक ही बात है। ईश्वर क्या है? शान्ति ईश्वर है। त्याग से शांति महसूस होती है। त्याग निराशा नहीं है। त्याग सच को समझने के बाद उठाया हुआ कदम है। इससे शुद्धि भी बनी हुई रहती है। चाह अशुद्ध करती है, त्याग शुद्ध करता है।

जब इंसान तप करता है तो सोचता नहीं है लेकिन माया के बारे में सोचता है। माया का अभ्यास सोचने के बाद ही होता है। माया का सम्बन्ध सोचने से है और सोचने का अर्थ कल्पना करना होता है और कल्पना कौन करता है? कल्पना मन करता है। इसलिए माया का जो निवास स्थान है वह मन है। अपने आपको फसाना नहीं है, बचाना है। फसाने का क्या अर्थ है? फसाने का अर्थ है बहुत सारा जीवन जीना और बचाने का अर्थ है जो आवश्यक है उसको जीना। बहुत सारा जीवन इंसान तब जीता है जब वह, जैसा वह जीना चाहता है वैसे जीवन की कल्पना कर लेता है और कल्पना में सब अच्छा ही लगता है पर परिणाम बहुत दुखदायी है, क्योंकि वहाँ कुछ वैसा है ही नहीं जिसकी हमने कल्पना कर ली, वो असत्य है। जैसे जादू कुछ नहीं होता बस दिखता है, वैसे माया है नहीं पर दिखती है। एक भ्रम है जिसमें इंसान फंस जाता है।

पाप का मतलब कर्मों में बंधना। तुम एक श्रेष्ठ काम कर रहे हो। तुम्हें माचों में मरने वाला कोई नहीं कहेगा। जब मुझे श्रेष्ठ बनना है तो मुझे यह समझना पड़ेगा की मुझे श्रेष्ठ तप से जिंदगी भर तपना पड़ेगा। शुद्धि में एक शुकून है। अभी वह ठीक से महसूस होता नहीं क्योंकि वह क्षणिक एहसास है और पाप का एहसास निरंतर है। वह खुशी देता है और खुश कौन नहीं होना चाहता। वह सुख की तरह लगता है। लेकिन तृप्ति नहीं होती। फिर मन भर जाता है। सुख वह है जो तृप्त कर देता है और जिससे कभी मन भरे नहीं। दुख है इच्छा। दुख है इच्छा को थोड़ा सा जी लेना। इसका नुकसान यह है, जिसे हमने थोड़ा सा जिया वह ज्यादा जिलाने की कोशिश करेगा। और परिणाम यह हो जायेगा, जिसे हमें थोड़ा भी नहीं जीना चाहिए उसे हम ज्यादा जीने लगेंगे।

महापुरुष और ईश्वर में फर्क तो कोई नहीं है पर महापुरुष वह है जिसका वह अंतिम जन्म था। मनुष्य शरीरधारी व्यक्ति जिसने ईश्वर तक की दूरी तय की। और सब मनुष्यों को इसी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है अपने आपको जानने के लिए आध्यात्मिक विकास अगर आप करना चाहते हैं अपने आसपास आध्यात्मिक वातावरण बढ़ा दें। वो आप कर सकते हो पुस्तक पढ़कर, अभ्यास करके। अगर आध्यात्मिक वातावरण नहीं बना पा रहे हो तो आध्यात्मिक विकास संभव नहीं। इसके साथ ही विपरीत ले जाने वाले वातावरण से बचना भी होगा। नहीं तो वो वापिस आपको गर्त में धकेल देगा। विपरीत वातावरण है लोग, विपरीत वातावरण है मोबाइल।

आप सही जा रहे हो इसकी पहचान आप खुद कर सकते हो। अगर आप शांत हो तो आप सही चल रहे हो। अगर आप अशांत हो तो कुछ गड़बड़ है। शांति विकास को दर्शाति है। आज भी ढोंग-धतूर बहुत चल रहा है।

जब ढोंग-धतूर की बात होती है तो हम सोचते हैं जो ऐसा कर रहा है वह गलत है। अनजाने में लोग ऐसा करते हैं। इसके पीछे कारण है 'मैं'। माया इतनी प्रचंड है कि जहाँ आशीर्वचन से मुक्ति हो सकती है, एक आशीर्वाद ही पर्याप्त है, रूप धरकर बैठ गई है। लो कर लो प्राप्त। मेरे गुरु हैं। मैं सही ही जानता हूँ। मैंने जिसको पकड़ा सही को ही पकड़ा है। राम-कृष्ण पर दुकानें चल रही हैं। हम राम और कृष्ण से आपको मिला देंगे। देखो देवता इतने प्रकार के हैं। हम लोगों की भलाई के लिए काम कर रहे हैं। ईश्वर का संरक्षण करने, ईश्वर की रक्षा करने तक का दावा किया जाता है। 70-80 किलो का शारीरिक ढांचा ईश्वर के लिए आंदोलन और लड़ने की बात करता है। कहता है ईश्वर क्या कहेगा, तुम मेरे लिए लड़ भी नहीं सके। हद से ज्यादा लाड़-प्यार और छूट औलाद को बिगाड़ देती है। फिर चाहे खाने के लिए सोने के बिस्किट हों उन्हें चबाया नहीं जा सकता। यही हाल यहाँ है, पूरी दुनिया बड़े वेग से काल के मुँह में जा रही है। पैसा-प्रतिष्ठा तो हत्या करता ही है, ईश्वर प्राप्ति भी विकराल काल के मुँह में फेंक देती है।

मैं देखता हूँ, कितना पाखंड फैल रहा है। मैं देखता हूँ, कितना झूठ का प्रचार हो रहा है। मेरा भाई-बन्धु ऐसा कर रहा है। मैं अगरबत्ती नहीं करूँगा तो ऐसा हो जाएगा। मैं मंदिर नहीं जाऊँगा तो ऐसा हो जाएगा। मैं मंदिर जाऊँगा तो ऐसा हो जाएगा। जो प्रेरक है उन्हें विवादों में खड़ा कर दिया। तुम ओम का जप नहीं कर सकते, तुम संन्यासी थोड़े ही हो। राधा का नाम जपने से कृष्ण जल्दी मिलते हैं। कौन कृष्ण? कोई प्रश्न नहीं करता। कृष्ण को प्राप्त करना चाहते हैं पर कृष्ण को जानना नहीं चाहते।

उस परम शांति की एक बूंद भी पर्याप्त है इंसान को तृप्त करने के लिए। कौन है यह परमशान्ति? क्या त्रेता में जो राम आये थे वो या द्वापर में जो कृष्ण आये थे वो? नहीं? आये थे शब्द ही गलत है। भयभीत इंसान को किसी भी तरह से भयभीत किया जा सकता है। मंत्रों का उच्चारण शुद्ध किया जाता है, जप चाहे कैसे ही करो। कोई यह क्यों नहीं पूछता जाप ज्यादा जरूरी है या मंत्र। राम और कृष्ण तो विष्णु के अवतार हैं। तो विष्णु कौन है? कोई देवता कहता है तो कोई भगवान। प्राप्ति तो उन विष्णु की होनी चाहिए जिनके राम और कृष्ण अवतार हैं। लेकिन प्राप्ति करवाने वाले राम और कृष्ण की ही प्राप्ति करवाना चाहते हैं। अभिवादन में जय श्रीकृष्ण कहा जाता है। गलत नहीं है। पर प्रचार तो गलत नहीं हो रहा है। जिनकी खोपड़ी में दीमक लगा है, जो पेट-पूजा में लगे हैं, उन्हें थोड़ा तांडव नृत्य तो करना ही पड़ेगा। लेकिन आम इंसान का क्या दोष है जो इनके पीछे पिस जाता है। जिन्दगी भर शान्ति की खोज में भटकते रहे पर क्रान्ति ने अपनी जगह न छोड़ी। तीन भगवान, तीनों अलग-अलग जगह रहते हैं। तीनों का स्वभाव अलग-अलग। मेरे स्वभाव से जो मेल खाते हों उन्हें ही मैं प्रसन्न कर सकता हूँ। दूसरे और तीसरे भगवान को कैसे प्रसन्न करूँ, कभी कोई काम पड़ गया तो? या जिन्हें प्रसन्न कर लिया उन्हीं से सिफारिश लगा दूँ। क्यों आध्यात्मिकता में सिफारिश चलती है? अगर चलती है तो कृष्ण ने अर्जुन के सिर पर हाथ रखकर प्राप्ति क्यों नहीं करवा दी। तो राधा की सिफारिश कैसे कृष्ण से मिला देगी। राधा हमारी प्रेरणा है। राधा की तरह लगने की जरूरत है। आध्यात्मिकता में सिफारिश नहीं श्रद्धा काम आती है।

हम सनातन धर्म के अनुयायी हैं। एक ने लकीर पकड़ी दूसरे ने लकीर पीटना शुरू कर दिया। हिन्दू धर्म सनातन है। हिन्दू कौन? धर्म का अर्थ क्या है? सनातन क्या है? जिस गीता को हिन्दू धर्म का ग्रंथ माना जाता है उस गीता में हिन्दू शब्द है ही नहीं। कितना आश्चर्य है। लकीर के फकीर तो ऐसा करते रहेंगे पर सच जानने का अधिकार सबको है। सनातन है ईश्वर। जो उस एकमात्र ईश्वर का अनुयायी है। जो उसकी प्राप्ति की सही विधि है उसमें लगा

हुआ है वह सनातन धर्म पर चलने वाला है फिर उसकी जाति चाहे कोई भी हो।

प्रचार उसी का हो रहा है जो सच नहीं है। और इंसान इस प्रचार को इतना सच मान रहा है जिसकी कल्पना नहीं। सही रास्ता होगा वहाँ ईश्वर प्रकट होकर सम्बल प्रदान करने लगता है। और यह सच है कि सब ईश्वर करता है। भूखे को भोजन करवाना नाम जप से भी बड़ा है। जिस जप से जन्म-जन्मांतरों से भटक रही भूखी-प्यासी आत्मा तृप्त हो जाती है वह इतना छोटा है। हम इतने बड़े हैं कि हम किसी का पेट भर सकते हैं। पेट तो परमात्मा भरता है। राधा और कृष्ण को लेकर भी विवाद है। कोई कहता है राधा कृष्ण की पत्नी है। कोई कहता है राधा कृष्ण की प्रेमिका है, राधा का विवाह तो किसी और से हुआ था। राधा और कृष्ण कौन हैं? दो शरीरधारी जीव नहीं। राधा और कृष्ण तो एक ही है। लेकिन जब शरीर ऊपर से लेकर नीचे तक बदबू मारने लगे तब समझना चाहिए, अरे अभागे जीव तू तो खुद जंजालों में फंसा हुआ है। मूल तक कोई जाता नहीं और परमात्मा की प्राप्ति सब करवाना चाहते हैं। जब दु:ख पड़ा ही नहीं तो परमात्मा दीखा ही नहीं। परमात्मा तो घोर दुख में प्रकट होता है। क्योंकि सुख की ही वर्षा दुखों के संग्राम के बाद ही होती है। ईश्वर तो खुद प्रकट होता है। हम कौन हैं जो ईश्वर की ओर बढने वाले हैं या किसी को ईश्वर की ओर ले जाने वाले हैं। इंसान अपनी इच्छा से कुछ भी करता है और कहता है मैं तो ईश्वर का काम कर रहा हूँ, तुम्हें ईश्वर की ओर ले जा सकता हूँ। क्या हमें ईश्वर ने यह सब करने के लिए कहा? हम तो इतने असुरक्षित हैं कि हमें हमारा पेट पालने के लिए खाता नम्बर देना पड़ता है। जो इस भय से ऊपर नहीं उठा वह दूसरों का भय कैसे दूर कर सकता है।

माया कामयाब होती जा रही है। माया ने माया का प्रचार किया। सामने जो शरीरधारी बैठा है क्या वो भगवान हैं? है भी, नहीं भी। ईश्वर तो अजन्मा हैं फिर वह इंसान के रूप में कैसे जन्म ले लेता हैं। ईश्वर एक ही स्थान पर क्यों रहता है? ब्रह्मा, ब्रह्मलोक में, विष्णु क्षीरसागर में, शिव कैलाश पर्वत पर। 33 करोड़ देवता, एक को पूजो दूसरा रुष्ट हो गया तो? कोई नुकसान भी कर सकता है। मुँह टेढ़ा हो सकता है। प्रकृति में भय के अतिरिक्त कुछ नहीं और भय यह सब करवाता है। हम सुरक्षा भी उनकी मांगते हैं जो कभी सुरक्षित हो नहीं सकता। कौन सही है कौन गलत। कहीं किसी के कहने पर हम गलत रस्ते पर न चले जायें। यह कोई नहीं सोचेगा सही रास्ते पर भी आ सकते हैं। कहने वाला तो इंसान भी है, पता नहीं सही कह रहा है या गलत। विवादों में, व्यक्ति के जीवन पर सब प्रश्न उठायेंगे पर रहस्य को जानने की कोई कोशिश नहीं करता। अशांति ही कर्म करवाती है। ईश्वर तो सत् चित आनन्द है। पर ढोंग धतूर फैलाने वाले कहाँ-कहाँ भटकाते हैं, बहकाते हैं। चलें सत् चित आनन्द के मार्ग पर चलें। ●

आनन्द और संतोष दोनों हैं मित्र,
जो सदा रहते हैं एक-दूजा के साथ।
आनन्द जो पाना है तो संतोष को बुलाओ,
संतोष आएगा तो आनन्द स्वत: आएगा साथ।।

- श्री अल्पज्ञ

मेरा क्षात्र धर्म

– भंवरसिंह मांडासी

दैव योग से शादी के पश्चात शीघ्र ही प्रथम पुत्र-रत्न की प्राप्ति हो गई। परन्तु धर्मपत्नी के इस आग्रह को टाल नहीं सका कि 'एक आँख का क्या तो खोलना व क्या बन्द करना।' धर्मपत्नी का आग्रह तो पूरा नहीं हुआ परन्तु क्रमशः एक के बाद एक लगातार तीन पुत्रियां होती गई।

रातों की नींद व दिन का चैन हराम हो गया। बस एक ही चिन्ता दिन-रात सताये जा रही थी कि इस क्षत्रिय समाज में तीन-तीन लड़कियों के लिए कैसे योग्य घर व वर ढूंढ पाऊँगा व कैसे दहेज व टीके की व्यवस्था कर पाऊँगा। एक साधारण-सी नौकरी के अलावा आय का कोई अन्य जरिया नहीं है।

बस लग गया मेरे 'क्षात्र-धर्म' के पालन में। 'मेरे' क्षात्रधर्म के माईने बदल चुके हैं। मेरा क्षात्र-धर्म वो पुराना 'क्षात्र-धर्म' नहीं है जिसमें क्षत्रिय दूसरों के लिए जिये व दूसरों के लिए मरे। मेरा क्षात्र-धर्म तो बिल्कुल बदल चुका है। मेरा क्षात्र-धर्म अब केवल यही है कि समाज में व्याप्त दहेज व टीका जैसी सामाजिक बुराई के रूप में मुँह बाये खड़े दानव से येन-केन-प्रकारेण पार पाकर बच्चियों के हाथ पीले कर सकूँ।

परिवार के हर आवश्यक खर्चों में कटौती करना शुरू कर दिया व 'चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय' के मुहावरे को सार्थक करते हुए लग गया धन संचय व पैसे जोड़ने में। स्वजनों द्वारा ही 'कंजूस', 'मक्खीचूस' व 'मूंजी' की उपाधियों से नवाजा जाने लगा। किसी की परवाह किये बगैर लग गया पूरे मनोयोग से 'मेरे' 'क्षात्र-धर्म' की पालना में।

केवल थोड़ा बहुत खर्च किया तो केवल बच्चियों की शिक्षा पर क्योंकि उनको 'ग्रेजुएशन' तक की शिक्षा दिलाना अति आवश्यक था। अन्यथा समाज में उनके साख सम्बन्ध (सगाई) के लिए किसी के पास जाता तो कोई बात करने को भी तैयार नहीं होता व मुझे दुत्कारते हुए यह कहकर भगा देता कि 'आपकी लड़की तो ग्रेजुएट ही नहीं है।'

मेरी तीनों बच्चियां भी बड़ी होनहार व प्रतिभाशाली निकली कि उन्होंने मेरे 'मूंजीपने' व 'कंजूसी' को पछाड़ देते हुए बड़ी मितव्ययता व अपनी स्कॉलरशिप के बल पर मेरी 'ग्रेजुएशन' तक की सीमाएं लांघते हुए पोस्ट ग्रेजुएशन से भी कुछ आगे तक की शिक्षा प्राप्त कर ली व मध्यम श्रेणी की सरकारी नौकरियाँ भी प्राप्त कर ली।

समय-समय पर धर्मपत्नी द्वारा किया जाने वाला आग्रह भी अनुचित नहीं था; 'एजी? आपणो घर कद बणास्यो? थारै साथ वाला सभी तो शहरां में घर बणा लिया है।' सांत्वना भरा उत्तर देता 'अपना भी जल्दी ही शहर में मकान बनायेंगे।' सांत्वना देने के सिवाय मेरे पास और था भी क्या? क्योंकि मैं मेरी कमाई में से तो एक भी पैसा खर्च करने को तैयार नहीं था। कमाई को तो संचित कर रहा था अपने क्षात्र-धर्म की पालना की आहुति देने व लड़कियों के पीले हाथ करने की व्यवस्था में खर्च करने हेतु।

अन्ततः उम्र भर की जोड़ी गई कमाई व थोड़ी-सी बची हुई पूर्वजों की पुश्तैनी जमीन की आहुति के बलबूते पर बच्चियों को समाज में ठीक-ठाक घर व वर दिलाने में सफल हुआ। मेरे क्षात्र धर्म की पालना पूरी हुई।

अब जीवन के अन्तिम समय में मन में इस बात का मलाल लिए बैठा हूँ कि यह क्षत्रिय समाज मुझे ऐसे 'क्षात्र-धर्म' की पालना के लिए मजबूर नहीं करता तो मेरा एकमात्र बच्चा नॉन-मैट्रिक नहीं रहता। मैं उसको अच्छी से अच्छी स्कूल में पढ़ाई करवाता व अच्छी शिक्षा दिलाता। उसकी शिक्षा के प्रति कंजूसी नहीं करता तो वह भी पढ़-लिखकर एक बड़ा अफसर बनता। आवारा व बेरोजगार नहीं घूमता। उसके बच्चों के भूख मरने की नौबत नहीं आती व पूर्वजों द्वारा विरासत में मिली थोड़ी-सी पुश्तैनी जमीन भी नहीं बिकती।

धर्मपत्नी को अग्नि की साक्षी में सात फेरों के साथ यह वादा करते हुए कि 'तेरी हर ईच्छा पूरी करूँगा' हाथ पकड़कर लाया था। उनकी एकमात्र इच्छा घर बनाने की भी

पूर्ण नहीं कर सका। मेरा अन्तर्मन मुझे धिक्कार रहा है। ''मूर्ख तूने कैसे तेरे क्षात्र-धर्म का पालन किया? क्या तूने अपने बच्चे व पत्नी के प्रति दायित्वों को पूरा किया?''

हाय! अब मेरे पास पश्चाताप की आग में जलने के सिवाय बचा ही क्या है? वाह रे मेरा क्षात्र-धर्म। तू कैसा क्षात्र-धर्म है? तूने मुझे क्या दिया? जीवन भर तेरी कठोरता से पालना में लगा रहा फिर भी समाज व परिवार में 'मूंजी', 'कंजूस' व 'मक्खीचूस' कहलाया। तूने मुझे कंगाल व भिखारी बना दिया व अन्त समय में मेरे बच्चे व पत्नी को दीन-हीन व घर-विहीन देख-देखकर मेरा हाल बेहाल हो रहा है व मेरे प्राण-पंखेरू इस नश्वर शरीर में अटके पड़े हैं। वाह मेरे क्षत्रिय समाज! तूने मुझसे अच्छे क्षात्र-धर्म का पालन करवाया।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना व्यक्ति का कोई अस्तित्व नहीं है। समाज में रहकर ही व्यक्ति का सर्वांगीण विकास सम्भव है। अतः समाज में रहना व्यक्ति की मजबूरी है।

क्षत्रिय समाज में व्याप्त कुरीति दहेज व टीका प्रथा ने आज समाज में व्यक्ति का जीना दूभर कर दिया है। उसके विकास के मार्ग को पूर्ण रूप से अवरुद्ध कर दिया है। आज इस समाज के परिवारों में कन्या का जन्म एक अभिशाप बन गया है। कोई भी कन्या को जन्म नहीं देना चाहता। जिस समाज में कभी नारी की पूजा की जाती थी, उसे शक्ति स्वरूपा, दुर्गा समझा जाता था, वो क्षत्राणी थी। जीते जी पति के साथ चिता में भस्म होने वाली ''जौहिरीणी'' थी। उसकी पैदाईश पर ही रोक लग गई। सोचिए अगर यह क्रम इसी तरह चलता रहा तो इस समाज व जाति का अस्तित्व खतरे में है।

वर्तमान में दहेज व टीके के लालच में युवकों की तथा आर्थिक दृष्टि के कमजोर अभिभावकों द्वारा मांग के अनुरूप दहेज व टीका न दे सकने के कारण युवतियों की शादियाँ उचित समय पर नहीं हो पा रही हैं, इस कारण से समाज में अन्तर्जातीय विवाहों का प्रचलन भी दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। फलस्वरूप क्षत्रिय जाति की धरोहर, जिसे हमारे पूर्वज हजारों-लाखों वर्षों से सहेज कर सुरक्षित रखते आ रहे थे: 'खून की पवित्रता व शुद्धता' वह भी अब धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है जो समाज को शनैः शनैः विघटन व पतन की ओर ले जा रही है। इस प्रकार से भी दहेज व टीका प्रथा क्षत्रिय समाज के टूटने का मुख्य कारण बनता जा रहा है।

अतः समाज के प्रबुद्धजनों, वृद्धों, नवयुवकों, वीर बालाओं, क्षत्राणियों सब मिलकर इस बुराई पर गहन चिन्तन-मनन करो, विचार करो व इस बुराई को जड़ से समूल नष्ट करने हेतु ठोस व सार्थक प्रयास करो जिससे यह समाज टूटने से बच सके। जो अत्यधिक लालची हैं व बिना टीका व दहेज लिए अपने पुत्रों की शादियाँ करना महापाप समझते हैं, ऐसे समाज बन्धुओं से निवेदन है कि समाज-हित में कम-से-कम इसका दिखावा तो बन्द करें जिससे प्रतिस्पर्धा न हो। इसमें तो कुछ लगने वाला भी नहीं है। दिखावा न करना भी समाज हित में उनका सहयोग माना जावेगा।

समाज के नवयुवकों व नवयुवतियों। अब इस समाज के लिए आशा की किरण एकमात्र आप ही बचे हो। यह समाज आपकी तरफ बड़ी आशा भरी दृष्टि से देख रहा है व याचना करते हुए अपनी मौन भाषा में संदेश दे रहा है कि 'ये दहेज व टीके के लोभी मुझे तोड़ने पर तुले हुए हैं। मैं टूट रहा हूँ। गर्त में जा रहा हूँ, रसातल में जा रहा हूँ, मुझे बचा लो। मेरा एकमात्र सहारा आप ही हो।'

अतः समाज के युवाओं व युवतियों! संकटग्रस्त समाज के इस मौन संदेश को गहराई से समझते हुए अब आपको आगे आना पड़ेगा व अभिभावकों की इच्छा के विपरीत सादगीपूर्ण तरीके से बिना दहेज व टीका लिए धड़ा-धड़ शादियों की शुरुआत कर इन बुराई के विरुद्ध जंग छेड़ना होगा। जिससे समाज में एक स्वस्थ वातावरण का निर्माण होगा तथा कन्या-जन्म को एक समारोह व उत्सव के रूप में मनाया जाने लगेगा। थालियाँ पुत्र जन्म की बजाय पुत्री के जन्म पर बजने लगेगी। बजनी भी चाहिए क्योंकि पुत्री का जन्म शुभ है, लक्ष्मी का आगमन है। नारी तो जननी है उससे ही वंशवृद्धि होती है। किसी कवि ने ठीक ही तो कहा है -

'नारी तूं है गुणों की खान।'

गतांक से आगे

आदर्श और अनूठे गाँव

– कर्नल हिम्मतसिंह

राज नांदगांव (छत्तीसगढ़)

सामुदायिकता की शक्ति

जनपदीय संस्कृति का मूल आधार सामुदायिकता है। इस सामुदायिकता में व्यक्ति कभी अकेलापन महसूस नहीं करता। उसके साथ उसका पूरा संसार है जो उसके सुख-दुख में शामिल होता है। यही सामुदायिकता कि शक्ति है। इसी शक्ति के जरिये लोग सामुदायिक रूप से अपने दायित्वों का निर्वहन करते हैं। इसी शक्ति का ज्वलंत उदाहरण पिछले 16 वर्षों से प्रस्तुत कर रहा है राजनंद गाँव। जिले के महिलायें जिन्होंने बदलते पर्यावरण में संतुलन स्थापित करने के उद्देश्य से 2000 सोख्ता गढ़ों के निर्माण का अभियान चला रखा है।

इस अभियान का श्रीगणेश 02 अक्टूबर, 2002 गाँधी जयंती के अवसर पर किया गया था। इस पानी बचाओं अभियान की शुरूआत 'माँ बलेश्वरी स्वयं सहायता समूह' की महिलाओं ने पद्मश्री फलबासन यादव के नेतृत्व में की थी। यहाँ की महिलायें पिछले 16 वर्षों से जल संरक्षण हेतु निरन्तर कार्य कर रहीं है।

सबसे पहले जिले के एक हजार से अधिक नदी नालों की बंधाई की गई। इस पहल के माध्यम से रेत के बोरों से पानी को रोका और लाखों हजार लीटर पानी को बर्बाद होने से बचाया गया। यह पूरा काम श्रमदान के लिए किया जा रहा है।

जल संरक्षण के लिए दो फिट गहरा गढ्ढ़ा खोदा जाता है। एक सोख्ता गड्ढा लगभग 55000 लीटर पानी सोख लेता है ये गढ्ढे हैण्डपम्प के पास घरों के भीतर बनाये जा रहे हैं और यह चार परतों का बनता है। प्रथम लेयर में पत्थर के टुकड़े, फिर ईंट के टुकड़े और अंत में कोयले और रेत से भराई की जाती है। सबसे पहले पानी रेत से होते हुए जाता है जिसके कारण पानी का सारा कचरा साफ हो जाता है। कोयले की परत पानी को पूरी तरह साफ कर देती है और फिर पानी ईंट और पत्थर के टुकड़ों से होते हुये जमीन में चला जाता है। इस प्रकार पानी के प्रत्येक बूंद का संरक्षण करने में यह अभियान पूर्ण रूप से सफल रहा है।

यह अभियान न केवल सामुदायिकता की शक्ति उजागर करता है बल्कि इस मान्यता को भी बल प्रदान करता है कि ''कोई भी देश यश के लिए शिखर पर तब तक नहीं पहुँच सकता जब तक उस देश की महिलाएँ कंधे से कंधा मिलाकर न चले।''

जब लोग सामुदायिकता की भावना से साधन जुटाते हैं तो यकीनन बड़ा कमाल करते हैं।

रंगसापाडा (असम)

स्वच्छ गाँव

गुवाहाटी से करीब 150 किमी दूर ग्वालपाड़ा जिले में एक ब्लॉक है बालिजाना। रंगसापाड़ा गाँव इसी ब्लॉक के अन्तर्गत आता है। इस छोटे से गाँव की कुल आबादी केवल 500 लोगों की है। लेकिन इन लोगों ने मिलकर एक ऐसी नायाब मिसाल कायम की है जिसके चर्चे असम में सभी की जुबान पर हैं।

आजकल देश में स्वच्छ भारत मिशन पर बहुत जोर दिया जा रहा है। प्रधानमंत्री हर मंच से स्वच्छता का संदेश देते हैं। लेकिन रंगसापाड़ा के लोगों ने स्वच्छता को आज से 30 वर्ष पूर्व ही अपना मूल मंत्र बना लिया था। नतिजतन रंगसापड़ा को पूरे असम का सबसे स्वच्छ गाँव होने का गौरव प्राप्त है। असम के मुख्यमंत्री सोनेवाल ने एक बड़े कार्यक्रम के दौरान गाँव को पाँच लाख रुपये की धनराशि प्रदान कर सम्मानित किया है।

रंगसापड़ा की इस उपलब्धी की कहानी कुछ इस प्रकार है। 1990 में यह गाँव भी अन्य गाँवों की तरह गंदा रहता था। लोग शराबी थे और आपस में लड़ते-झगड़ते रहते थे। एक दिन गाँव के मुखिया राबर्टसन ने गाँव सभा का आयोजन किया और गाँव की दशा को सुधारने के लिये प्रेरित किया और कहा कि हमें इस बारे में मिलकर सोचना चाहिये।

इस बैठक में सभी की सहमति से कुछ सख्त फैसले लिये गये। तय किया गया अब कोई खुले में शौच को नहीं जायेगा, गंदगी नहीं फैलायेगा और किसी भी तरह का नशा नहीं करेगा। गाँव वालों ने इन तीनों ही नियमों को पालन करने का संकल्प लिया। साथ ही यह भी तय किया कि नियम तोड़ने पर 5001 रुपये का जुर्माना भुगतना पड़ेगा। यह बड़े गर्व की बात है कि लोगों ने नियमों का सदैव पालन किया।

सन् 2002 में एक विलेज मैनेजमेन्ट कमेटी का गठन किया गया, जिसकी सदस्य संख्या 10 रखी गई। गाँव वाले मिलकर इस कमेटी का चयन हर वर्ष करते हैं। यह कमेटी गाँव की साफ सफाई, सौहार्द, और नशे आदि पर नजर रखती है।

जब प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने स्वच्छ भारत मिशन का आगाज किया तो रंगसापाड़ा में खुशी की लहर चल पड़ी। पहले गाँव में कच्चे शौचालयों का निर्माण घरों में ही श्रमदान के जरिये कराया गया था। अब सरकारी योजना आने पर पक्के शौचालयों का निर्माण कराया गया है। गाँव को अब पक्की सड़क से भी जोड़ा जा चुका है।

युनिसेफ के स्वच्छता कार्यक्रम के असम प्रभारी के अनुसार असम पूरा राज्य खुले में शौच मुक्त है। युनिसेफ यहाँ काम कर रहे गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से गाँव-गाँव जाकर स्वच्छता के प्रति लोगों को जागरूक करने का कार्य ही नहीं कर रहा अपितु पक्के शौचालयों के निर्माण में मदद भी कर रहा है।

गहमर एशिया का सबसे बड़ा गाँव सैनिकों वाला गाँव

उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले का गहमर गाँव ना सिर्फ एशिया के सबसे बड़े गाँवों में गिना जाता है बल्कि इसकी ख्याति फौजियों के गाँव के रूप में भी विख्यात है। सन् 1530 में कुसुम देव राव ने सुकरा डीह नामक स्थान पर इसे बसाया था। यह गाजीपुर से 38 किमी की दूरी पर स्थित है। इस गाँव के करीब 12 हजार फौजी इस समय भारतीय सेना में जवान से लेकर कर्नल तक विभिन्न पदों पर कार्यरत हैं जबकि 15 हजार से अधिक भूतपूर्व सैनिक हैं।

यहाँ के हर परिवार का कोई ना कोई सदस्य भारतीय सेना में कार्यरत है। बिहार-उत्तर प्रदेश की सीमा पर बसा गहमर गाँव करीब आठ वर्गमील में फैला है। लगभग एक लाख बीस हजार आबादी वाला यह गाँव 22 पट्टी या टोले में बंटा हुआ है और प्रत्येक पट्टी किसी ना किसी प्रसिद्ध व्यक्ति के नाम पर है। गाँव में भूमिहार को छोड़ वैसे सभी जाति के लोग रहते हैं लेकिन सर्वाधिक संख्या राजपूतों की है और लोगों की आय का मुख्य स्रोत नौकरी ही है।

प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध हो या 1968 या 1971 का युद्ध या फिर कारगिल की लड़ाई, सब में यहाँ के फौजियों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। विश्व युद्ध के समय में अंग्रेजों की फौज में गहमर के 228 सैनिक शामिल थे, जिनमें 21 मारे गये थे। इसकी याद में गहमर महाविद्यालय के मुख्य द्वार पर एक शिलालेख लगा हुआ है गहमर के भूतपूर्व सैनिकों ने, पूर्व सैनिकों ने पूर्व सैनिक सेवा समिति नामक संस्था बनाई है।

संयोजक शिवानंद सिंह कहते हैं, दस साल पहले स्थापित संस्था के करीब तीन हजार सदस्य हैं और प्रत्येक रविवार को समिति की बैठक कार्यालय में होती है जिसमें गाँव और सैनिकों की विभिन्न समस्याओं सहित अन्य मामलों पर विचार किया जाता है। गाँव के लड़कों को सेना में बहाली के लिये आवश्यक तैयारी में भी मदद दी जाती है।

गाँव के युवक गाँव से कुछ दूरी पर गंगा तट पर

स्थित मठिया चौक पर सुबह शाम सेना में बहाली की तैयारी करते नजर आ जाएँगे। यहाँ के युवकों की फौज में जाने की परम्परा के कारण ही सेना गहमर में ही भर्ती शिविर लगाया करती थी, लेकिन 1986 में इस परम्परा को बंद कर दिया गया और यहाँ के लड़कों को बहाली के लिये लखनऊ, रुड़की, सिकंदराबाद जाना पड़ता है।

गहमर भले ही गाँव हो, लेकिन यहाँ शहर की तमाम सुविधाएँ विद्यमान हैं। गाँव में ही टेलीफोन एक्सचेंज, दो डिग्री कॉलेज, दो इंटर कॉलेज, दो उच्च विद्यालय, दो माध्यमिक विद्यालय, पाँच प्राथमिक विद्यालय, स्वास्थ्य केन्द्र आदि हैं। यहाँ के लोग फौजियों की जिन्दगी से इस कदर जुड़े हुए हैं कि चाहे युद्ध हो या कोई प्राकृतिक विपदा, यहाँ की महिलाएँ अपने घर के पुरुषों को उसमें जाने से नहीं रोकती बल्कि उन्हें प्रोत्साहित कर भेजती हैं।

गहमर रेल्वे स्टेशन पर कुल 11 गाड़ियाँ रुकती हैं और सबसे कुछ ना कुछ फौजी उतरते ही रहते हैं लेकिन पर्व त्यौहारों के मौके पर यहाँ उतरने वाले फौजियों की भारी संख्या को देख ऐसा लगता है कि स्टेशन सैन्य छावनी में तब्दील हो गया हो।

सेवरई को तहसील बनाने की योजना है। अगर ऐसा होता है तो गहमर दो राजस्व गाँवों में बढ़ सकता है।

खीचन (राजस्थान)
प्रवासी पक्षियों का चुग्गा घर

भारतीय जनमानस में पर्यावरण संरक्षण की चेतना और पर्यावरण संरक्षण के प्रयासों की परम्परा सदियों पुरानी है। हमारे धर्मग्रंथ, हमारी समाजिक लोक कथाएँ और हमारी जातीय परम्परायें हमें प्रकृति से जोड़ती हैं। प्रकृति संरक्षण हमारी जीवन शैली का अभिन्न अंग है।

प्रकृति में जो कुछ भी है, वनपस्पति, जीव-जन्तु, जल, मिट्टी आदि सभी जीवंत हैं, प्राणवान हैं। जो जीवंत या प्राणवान है उन्हें अपने लिये खुराक भी चाहिये। यह प्रकृति की ही खूबी है कि वह अपनी खुराक स्वयं तैयार करती है उसी से वह स्वयं पोषण प्राप्त करती है और अपने ही द्वारा नियंत्रित चक्र से दूसरों को भी पोषित करती है। परन्तु हमारी परिवेशिकी के साथ हिंसा और विलगाव, इन परिस्थितियों में प्रकृति प्रदत्त स्वास्थ्य, सौन्दर्य और स्थायित्व दीर्घकाल तक प्रस्थापित नहीं रह सकते। इनके पुनर्स्थापन के लिये हमें लालच और स्वार्थ की वृति का त्याग करना होगा और मानव मूल्यों का सम्मान कर उन्हें दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ अंगीकार भी करना होगा।

प्रकृति का जो संतुलन हमने बिगाड़ा है उसे हमें सुधारना होगा। लुप्त होती वनस्पति और जीव जंतुओं का संरक्षण और संवर्धन अब हमारी नैतिक जिम्मेदारी है। इसी जिम्मेदारी को पूरा करने की दिशा में अनेक लोग प्रयासरत हैं।

जैसे कोकरे (कर्नाटक) निवासी प्रवासी पक्षियों, विशेष रूप से पेंटेड स्टॉर्क्स और स्पॉटबिल्ड पेल्किंस को न केवल संरक्षण देते बल्कि अपने पुत्रियों के समान उनका भरण पोषण करते हैं। वैसे ही राजस्थान में जोधपुर जिले की फलौदी तहसील में स्थित खीचन गाँव निवासी प्रवासी पक्षी डेमोईजेल, जिसको स्थानीय लोग कुर्जा कहते हैं। मेहमान-नवाजी हेतु विश्व स्तर पर अपनी पहचान बना चुके हैं। कुर्जा डेमोईजेल क्रेन मध्य युरेशिया में पाये जाने वाले क्रेन की एक प्रजाति है। यह पक्षी 85-100 सेमी लम्बा, 75-80 सेमी ऊँचा, इसके पंखों का फैलाव 185-180 सेमी और इनका वजन 2-3 किग्रा होता है। कुर्जा शर्मिले मिजाज का, एकांत प्रिय, खुशी से झूमने वाला और तुरही के बजने जैसी आवाज वाला पक्षी, जो झुंड में रहना पसंद करता है।

कुर्जां अधिकतर जोधपुर और बीकानेर सम्भाग के गाँवों के तालाब के किनारे पानी पीने के लिये डेरा डालती हैं। यह पक्षी साईबेरिया से ईरान-अफगानिस्तान होते हुये भारत आते हैं और भरतपुर के घना पक्षी विहार में विचरण करना अधिक पसंद करते हैं।

खीचन गाँव में इन पक्षियों का आगमन अगस्त माह के अंत में प्रारम्भ होता है और सितम्बर मध्य तक वे

(शेष पृष्ठ 34 पर)

अपनी बात

प्राणी का जीवन एक अविरत विकास है। प्रतिपल एक अनवरत धारा बहने का रूप है। जैसे गंगा बहती है सागर की ओर, और जब तक सागर न हो जाए, सागर तक पहुँच न जाए, तब तक चैन नहीं लेती लगातार धारा बहती ही रहती है। ऐसी ही बेचैनी मनुष्य की भी चाहिए कि जब तक वह परमात्मा को प्राप्त न कर ले, तब तक चैन न हो।

हम अक्सर सुनते हैं-संतोष रखो। संतोष रखना ठीक बात है लेकिन यह आधा ही ठीक है और आधे सच कभी-कभी झूठ से भी बदतर, झूठ से भी महंगे पड़ जाते हैं। वे आधे सच होते हैं इसलिए सच जैसे ही मालूम पड़ते हैं लेकिन झूठ से भी खतरनाक हो सकते हैं।

दूसरे पक्ष की तरफ भी थोड़ा ध्यान देकर समझ लेना चाहिए। जो कहा जाता है कि संतोष रखो, वह कहा जाता है बाहर के सम्बन्ध में। लेकिन एक बड़ा सत्य, इससे भी बड़ा सत्य यह है कि भीतर की तरफ निरंतर असंतोष चाहिए। अर्थात् सांसारिक विषयों में संतोष को बनाए रखें लेकिन अपने स्वयं के विषय में असंतुष्ट बने रहना चाहिए। इन अलग-अलग पंखों से अलग-अलग क्षेत्र में यात्रा होनी चाहिए।

हम सांसारिक लोग अधिकतर उल्टे ही होते हैं। लोग अपने से तो संतुष्ट होते हैं लेकिन संसार से असंतुष्ट होते हैं। जितना धन है उसमें संतोष नहीं है, यात्रा यह है कि धन और बढ जाए। जिसका जितना पद है, उससे थोड़ा बड़ा पद हो जाए। जितनी प्रतिष्ठा है, वह और अधिक बढ जाए। इन सांसारिक विषयों में इस प्रकार का असंतोष बना रहता है। लेकिन मेरी आत्मा थोड़ी निखर जाए। यह छोटा-सा आंगन बड़ा आकाश बन जाए। यह आत्मा का छोटा झरना सागर बन जाए, यह छोटी-सी बूंद महासागर हो जाए। इसके लिये कोई असंतोष नहीं है। आदमी उल्टा खड़ा है। बाहर से तो उसने असंतोष जोड़ लिया है और भीतर से संतोष जोड़े बैठा है। इसको बदलने की आवश्यकता है। इसकी बदलाहट ही धर्म मार्ग है। बदलाहट लाकर धर्म मार्ग की यात्रा करना ही जीवन की अविरत विकास यात्रा का उद्देश्य है।

केवल मंदिर जाने से ही हम धार्मिक नहीं बनते। धर्म का इतना सस्ता जन्म नहीं होता। जीवन को पूर्णतया बदलना पड़ता है। और पूर्णतया बदलने का पहला सूत्र है कि बाहर से संतुष्ट रहना प्रारम्भ करें और भीतर से असंतुष्ट रहकर निखार बढाते रहें। एक दिव्य असंतोष की आग जलनी चाहिए कि मैं जैसा जन्मा हूँ वैसा ही न मर जाऊँ-अंधेरे-अंधेरे में, अमावस-अमावस में। पूर्णिमा होकर मरूँ। मृत्यु आए उसके पहले पूरा चाँद उगे। मृत्यु आए, इसके पहले जान लूं कि मैं कौन हूँ, पहचान लूँ कि मैं कौन हूँ।

और मजा यह है कि जो जान लेता है कि मैं कौन हूँ, उसकी मृत्यु कभी आती नहीं। देह मरती है, रूप मरता है पर भीतर जो मालिक छिपा है, वह कभी नहीं मरता। जो पहचान लेता है अपने को, उसी पहचान में अमृत हो जाता है। आत्मा ज्ञान ही अमृत का द्वार है।

जहाँ असंतोष होता है, वहीं संघर्ष होता है। अगर व्यक्ति बाहर से असंतुष्ट है तो उसे बाहर के विषयों के लिए संघर्ष करना होगा। धन के लिये लड़ता है, धन के लिए दौड़ता है। आपाधापी होगी। अगर बाहर से संतुष्ट हो गए तो बाहर कोई संघर्ष नहीं है। फिर संघर्ष की यात्रा भीतर होती है। अपने अंधेरे को व्यक्ति काटता है। वह सब तोड़ डालता है जिससे व्यक्ति की मूर्च्छा पनपी है, मूर्च्छा समाप्त हो जाएगी। उस सबको मिटाने में संघर्ष करना है जिसने जीवन को कचरे से भर दिया है। फिर जो भी असार है भीतर उसे घास-पात की तरह उखाड़ फेंकने में संघर्ष करना है। तभी तो वह पुष्प खिलेगा जो भीतर का वास्तविक स्वरूप है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ की साधना में इसीलिए स्पष्ट किया जाता है कि अपने सांसारिक दायित्व निभाओ पर उनमें लिप्त मत बनो। यही सांसारिक संतोष का रास्ता है, बाहर के संतोष का रास्ता है। परन्तु जीवन को सार्थक बनाने के लिए अपने भीतर उस ज्वाला को प्रज्वलित करने में निरंतर लगे रहो। उस मार्ग में संतोष नहीं करना है। संघर्ष चलता है अपने भीतर बैठी दुष्वृतियों से। जैसे-जैसे दुष्वृतियाँ हटती जाती हैं, जीवन के निखार में वृद्धि होती है। जीवन में प्रकाश पैदा होता है। संघ की साधना में वह संघर्ष लगातार चलता है। अपने-अपने जीवन का आकलन निरन्तर करते रहें और भीतरी संघर्ष में लगे रहें, पहुँचेंगे उस अमृत द्वार तक।

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं -

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान, मार्ग आदि
01.	प्रा.प्र.शि.	30.09.2024 से 03.10.2024 तक	गजसिंह का गाँव (जैसलमेर)
02.	प्रा.प्र.शि.	10.10.2024 से 13.10.2024 तक	टावरीवाला (जैसलमेर)
03.	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	10.10.2024 से 13.10.2024 तक	पीलवा (फलौदी)
04.	प्रा.प्र.शि.	10.10.2024 से 13.10.2024 तक	कुड़ (जोधपुर) संशोधित समय
05.	प्रा.प्र.शि.	10.10.2024 से 13.10.2024	विश्वकर्मा नगर (जोधपुर)
06.	प्रा.प्र.शि.	10.10.2024 से 13.10.2024 तक	गेलासर (नागौर)
07.	प्रा.प्र.शि.	10.10.2024 से 13.10.2024 तक	पहाड़पुरा (जालौर)
08.	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	11.10.2024 से 14.10.2024 तक	आलोक आश्रम (बाड़मेर)
09.	मा.प्र.शि.	24.10.2024 से 30.10.2024 तक	पांचोदा, श्री नागणेची माताजी मंदिर, तह. आहोर (जालौर) मदनसिंह थूंबा-9413495628, खुमानसिंह दूटिया-9982067270 देवीसिंह प्रतापगढ़-9001119848
10.	मा.प्र.शि.	24.10.2024 से 30.10.2024 तक	सनावड़ा (जैसलमेर)
11.	मा.प्र.शि.	25.10.2024 से 31.10.2024 तक	कल्याणपुर (बालोतरा)
12.	प्रा.प्र.शि.	26.10.2024 से 29.10.2024	रायकी (डूंगरपुर)
13.	मा.प्र.शि.	26.10.2024 से 31.10.2024	दिवराला, अणंतसिंह राजपूत सभा भवन, तह. श्रीमाधोपुर (नीमकाथाना) श्री माधोपुर, रींगस, शाहपुरा, सीकर, चूरू, अलवर, दांतारामगढ़, परबतसर, मेड़ता से बस उपलब्ध। जयसिंह दिवराला-9414782772, विक्रमसिंह दिवराला- 8058935460 प्रदीपसिंह दिवराला-9887601001, विजेन्द्रसिंह दिवराला-9928101390 धीरसिंह दिवराला-9667389111

14.	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	3.11.2024 से 6.11.2024 तक	बडोड़ा गाँव (जैसलमेर)
15.	मा.प्र.शि.	4.11.2024 से 10.11.2024 तक	मालजीभी पीपड़िया, तह. जामकण्डोरना (राजकोट)
16.	मा.प्र.शि. (बालिका)	5.11.2024 से 11.11.2024 तक	थोरड़ी–तह. जामण्डोरना (राजकोट)
17.	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	11.11.2024 से 14.11.2024 तक	कालेवा (बालोतरा)

गजेन्द्र सिंह आऊ
शिविर कार्यालय प्रमुख (श्री क्षत्रिय युवक संघ)

पृष्ठ 29 का शेष

आदर्श और अनूठे गाँव

काफी संख्या में वहाँ पहुँच जाते हैं। इनका प्रजनन समय अक्टूबर से जनवरी तक होता है और मार्च के महीने में ये घर वापसी करते हैं।

ये मेहमान पक्षी जत्थे के रूप में आते हैं और अपने पड़ाव स्थल पर उतरने से पहले गाँव के ऊपर कई चक्कर लगा कर पड़ाव स्थल की सटीक निगरानी करते हैं। स्थान की ठीक पहचान कर लेने के पश्चात् अगले दो दिनों में ये उस स्थान पर उतरते हैं। उनके आने की संख्या में वृद्धि होने से सुबह और शाम को गाँव के ऊपर अनेक चक्कर लगाकर फिर दाना चुग्गा स्थल पर उतरकर दाना चुगते हैं। और फिर शाम को गाँव से दूर अपने सुरक्षित ठिकानों पर चले जाते हैं।

सूखे रेगिस्तानी इलाके में पिछले 50 सालों से चली आ रही परम्परा का निर्वहन कर रही फ्रेंस (कुर्जां) वाकई कौतुहल का विषय और देश की संस्कृति (अतिथि देवो भवः) पर गर्व का एहसास कराने वाला अवसर भी प्रदान करती है। क्रेन के साथ बैठा कबूतरों का झुंड दर्शकों को यह अहसास करवाता है मानों वे मेजवान बन देश में पधारे प्रवासी मेहमानों की आवभगत कर रहे हैं।

खीचन गाँववासियों की मेहमान नवाजी और दरियादिली की दाद देनी पड़ेगी कि असंख्य मेहमानों की आवभगत और गर्मजोशी में न तो कभी कोताही बरतते हैं और न ही शिथिलता आने देते हैं। सैंकड़ों किलो दाने का प्रबन्ध हर रोज स्वतः ही हो जाता है।

गाँव में गूंजता इन प्रवासी पक्षियों का कलरव और स्वच्छन्द अठ्ठखेलियों को सुनने और देखने के लिए प्रतिदिन देशी और विदेशी पर्यटकों का आना–जाना लगा ही रहता है। ग्राम पंचायत ने पर्यटकों की सुविधा के लिए अनेक विकास कार्य करवाये हैं। इस गाँव के बारे में 'खीचन, दा डेमोईस्ले क्रेन गाँव' नामक एक लेख बर्डिंग वर्ल्ड पत्रिका में प्रकाशित हुआ, उसके बाद यह गाँव अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध हो गया।

कुर्जां पक्षी का स्थानीय महत्त्व भी सदियों से रहा है। यह पक्षी संदेशवाहक के प्रतीक के रूप में लोकगीतों में खूब गाया जाता है। उसके उड़ने की तेज रफ्तार जहाँ प्रियतमा का संदेश प्रेमी के पास शीघ्र पहुँचाने की क्षमता रखता है तो इसके पंखों का विस्तृत फैलाव ढेर सारा संदेश लिखने का स्थान भी उपलब्ध कराता है।

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर
SS KIRTEE
AN ISO 9001 : 2015 CERTIFIED COMPANY
Piping is Our Business Satisfaction is Our Goal
17425
CML-8600120461
IS:12786
CML-8600120457
IS:4984
CML-8600120464
Mr. Surendra Singh Shekhawat
Director
Shree Ganesh Enterprises
Manufacture Of:-
SS KIRTEE BRAND ISI HDPE Sprinkler Pipe
Mini Sprinkler System | HDPE Pipes & Coils For Water
SHREE GANESH ENTERPRISES
Khasra No. 315/6, 317,318, RIICO Road, Prasrampura, SKS Industrial Area
Reengus, Sikar (Rajasthan)
8209398951 surendrasinghshekhawat234@gmail.com
GANESH
HOTEL
Ganesh Singh Maharoli
Datar Singh Maharoli
Opp. Polovictory Cinema. Station Raod, Jaipur | Contact No. 9929105156

अक्टूबर, सन् 2024
वर्ष : 61, अंक : 10

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या – Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्...

....

....

श्री संघशक्तिप्रकाशन प्रन्यास (स्वत्वाधिकारी) के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राजेन्द्र सिंह राठौड़ द्वारा भास्कर प्रिंटिंग प्रेस, डी बी कोर्प लिमिटेड, प्लोट नंबर-01, मंगलम कनक वाटिका के पीछे, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, रेल्वे क्रोसिंग के पास, बिलवा, शिवदासपुरा, टोंक रोड़, जयपुर (राजस्थान)-303903 (दूरभाष -6658888) से मुद्रित एवं ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर- 302012 (दूरभाष- 2466353) से प्रकाशित। संपादक राजेंद्र सिंह राठौड़ । Email : sanghshakti@gmail-com | Website : www-shrikys-org